प्रस्तावना

स्वर्गीय श्री ज्ञानचन्द जी मिन्नी की पुण्य स्मृति मे "समता स्वाध्याय सौरभ" प्रथम भाग का द्वितीय सस्करण सुधी धर्माराधको के पावन कर कमलो में सौंपते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। इस पुस्तक का द्वितीय संस्करण इतना शीघ्र प्रस्तुत करने का जो सुअवसर मिला है, वह स्वतः इस पुस्तक की सामग्री के प्रति धर्मनिष्ठ जनो की सहज अभिरूचि का जीवन्त प्रमाण है।

समता दर्शन प्रणेता आचार्य श्री नानेश की समता सौरभ को अपने कलेवर मे समाहित किए यह पुस्तक आचरण के क्षेत्र का एक सरल आलम्बन है। शास्त्रकारो ने स्वाध्याय को महान् तप निरूपित किया है और प्रस्तुत पुस्तक स्वाध्याय के क्षेत्र में प्रारम्भिक चरण की प्रस्थापना से लेकर साधक को स्वाध्याय पथ का नियमित पथिक बनाने की दिशा मे एक सार्थक प्रयास है।

दैनन्दिन जीवन की श्रावक धर्माराधना सम्बन्धी सामग्री के एक स्थान पर समग्र सकलन से इस पुस्तक का महत्व और भी बढ गया है। सामायिक, प्रतिक्रमण सूत्र के साथ भक्तामर स्तोत्र, कल्याण मन्दिर स्तोत्र, आलोयणा, विविध प्रत्याख्यान पाठ दिन–रात का चौघड़िया आदि उपलब्ध होने से यह पुस्तक आबाल-वृद्ध हेतु उपयोगी बन गई है।

ऐसी लोकोपयोगी पुस्तक के प्रकाशन हेतु श्रीमान् शिखरचन्द जी प्रकाशचन्द जी मोहित कुमार जी मिन्नी को हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करता हूं जिन्होने पूर्ण अर्थ सहयोग देकर पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग दिया।

निवेदक

माघ शुक्ला १३ स २०४८ — इन्द्रचन्द दुगड़

॥ श्री वीतरागाय नम ॥

श्री सामायिक सूत्र

मूल पाठ

१—नमस्कार मन्त्र

णमो अरिहंताण । णमो सिद्धाण ।
णमो आयरियाण । णमो उवज्झायाण ।
णमो लोए सव्व-साहूण ।

एसो पच णमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो ।
मगलाण च सव्वेसि, पढम हवइ मगल ॥१॥
(भगवतीसूत्र मगलाचरण) (कल्पसूत्र मगलाचरण)

२-गुरु वन्दना-तिक्खुत्तो का पाठ

तिक्खुत्तो आया-हिण पया-हिण करेमि वदामि णम-सामि सक्कारेमि सम्मा-णेमि कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवा-सामि मत्थ-एण वदामि ।

(रायप्पसेणी सूत्र—८)

३-इरियावहिय (इच्छाकारेण) का पाठ

इच्छा-कारेण, सदि-सह, भगव इरिया-वहिय पडिक्क-मामि इच्छ-इच्छामि, पडिक्कमिउ, इरिया-वहि-याए, विरा-हणाए, गमणा-गमणे, पाणक्कमणे वीयक-कमणे, हरियक-कमणे, ओसा-उर्त्तिग पणग-दग, मट्टी-मक्कडा, सताणा, सकमणे, जे मे जीवा, विरा-हिया, एगि-दिया, बेइदिया, तेइदिया, चउ-रिंदिया, पचे-दिया अभिहया, वत्तिया, लेसिया, सघा-इया, सघट्-टिया परिया-विया, किला-मिया, उद्द-विया, ठाणाओ, ठाण, सका-मिया, जीवियाओ, ववरो-विया, तस्स, मिच्छामि दुक्कड ।

(हरिभद्रीयावश्यक पृ ५७२)

४—तस्स उत्तरी का पाठ

तस्स-उत्तरी-करणेण, पायच-छित्त-करणेण, विसोहि-करणेण, विसल्ली-करणेण, पावाण, कम्माण, निग्घाय-णट्ठाए, ठामि, काउस्सग्ग । अणत्थ, उससिएण, नीसीसिएण, खा-सिएण, छीएण जभाइ-एण, उड्डू-एण, वाय-निसग्गेणं, भम-लीए पित्त-मुच्छाए, सुहु-मेहिं अग-सचालेहिं, सुहु-मेहिं खेल-सचा-लेहिं, सुहु-मेहि दिट्ठि-सचालेहिं, एव-माइएहि, आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहताण, भगवताण, णमुक्कारेण, न पारेमि, ताव-काय ठाणेण, मोणेण, झाणेण, अप्पाण वोसिरामि ।

(हरिभद्रीयावश्यक पृ. ७७८)

५—लोगस्स का पाठ

लोगस्स उज्जोय-गरे, धम्म-तित्थ-यरे जिणे ।

अरि-हन्ते कित्त-इस्सं, चउवी-सपि केवली ॥१॥

ऊसभ-मजिय च वन्दे, सभव-मभि-णदण च सुमइच।
पउमप्पह सुपास, जिण च चदप्पह वन्दे ॥२॥

सुविहिं च पुप्फ-दत, सीयल-सिज्जस-वासु-पुज्ज च ।
विमल-मणत च जिण, धम्म सति च वदामि ॥३॥

कुथु अर च मल्लि वन्दे, मुणि-सुव्वय नमिजिण च ।
वदामि रिट्ठ-नेमि पास तह वद्ध-माण च ॥४॥

एव मए-अभिथुआ, विहुय-रय-मला पहीणजर-मरणा।
चउवी-सपि जिणवरा, तित्थ-यरा मे पसीयतु ॥५॥

कित्तिय-वदिय-महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरुग्ग-वोहि-लाभ, समाहि-वर-मुत्तम-दितु ॥६॥

चदेसु निम्मल-यरा, आइच्चेसु अहिय पयासयरा ।
सागर-वर-गम्भीरा, सिद्धा-सिद्धि मम दिसन्तु ॥७॥

(हरिभद्रीयावश्यक पृ ४९२-५०९)

६—करेमि भन्ते का पाठ

करेमि भन्ते ! सामाइय, सावज्ज जोग पच्चक्खामि जाव-नियम पज्जुवा-सामि दुविहं तिविहेण न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भते ! पडिक्-कमामि निदामि गरिहामि अप्पाण वोसिरामि ।

(हरिभद्रीयावश्यक पृ ८५४)

७-णमोत्थुणं का पाठ

णमोत्थुण, अरि-हंताण, भगवंताण, आइगराण, तित्थ-यराण, सयस-बुद्धाण, पुरि-सुत्तमाण, पुरिस-सीहाण, पुरिस-वर-पुंडरी-याण, पुरिस-वर-गध-हत्थीण, लोगुत्तमाण, लोग-नाहाण, लोग-हिम्राण, लोग-पई वाण, लोग-पज्जोअ-गराण, अभय-दयाण, चक्खु-दयाण, मग्ग-दयाण, सरण-दयाण, जीव-दयाण, बोहि-दयाण, धम्म-दयाण; धम्म-देसयाण, धम्म-नाय-गाणं, धम्म-सार-हीण धम्मवर-चाउ-रंत, चक्क-वट्टीण, दीवो-ताण, सरण-गई, पइट्ठा, अप्पडि-हय-वर-नाण-दसणधराण विअट्टछउ-माण, जिणाण, जाव-याण, तिण्णाण, तारयाण, बुद्धाण बोहयाण, मुत्ताण, मोअ-गाण, सव्वणूण, सव्व-दरि-सीण, सिव-मयल, मरुअ, मणत, मक्खय, मव्वाबाह, मपु-णरा-वित्ति, सिद्धि-गइनाम-धेय, ठाण, सपत्ताण, नमो जिणाणं जिअ-भयाण ।

(औपपातिक सूत्र १२) (कल्पसूत्र शक्रस्तव)

एयस्स नव-मस्स, सामाइय-वयस्स, पच, अइ-यारा जाणि-यव्वा, न समा-यरि-यव्वा, तजहा ते आलोउ --मण-दुप्पणि-हाणे, वय-दुप्पणि-हाणे, काय-दुप्पणि-हाणे, सामाइ-यस्स, सइ अकरणया सामाइ-यस्स, अण-वट्ठि-यस्स, करणया तस्स मिच्छा मि दुक्कड ।

(हरिभद्रीयावश्यक पृ ८१३)

सामाइय सम्म काएण न फासिय, न पालिय, न तीरिय, न किट्टिय न सोहिय, न आराहिय, आणाए अणु-पालिय, न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

सामायिक मे दस मन के, दस वचन के, बारह काया के, इन कुल बत्तीस दोषो मे से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामायिक मे स्त्री-कथा, भक्त-कथा, देश-कथा, राज-कथा, इन चार विकथाओं मे से कोई कथा की हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामायिक मे अति-क्रम, व्यति-क्रम, अतिचार, अनाचार, जानते-अजानते, मन-वचन, काया से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामायिक व्रत विधि से लिया, विधि से पूर्ण किया, विधि मे कोई अविधि हुई हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामायिक का पाठ बोलने मे काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, न्यूनाधिक, विपरीत पढने मे आया हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान की साक्षी से तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामायिक लेने की विधि

सर्वप्रथम स्थान, आसन, पूंजणी, मुख-वस्त्रिका आदि की पडिलेहणा करना । फिर यतनापूर्वक स्थान पूंज कर आसन बिछाना । बाद मे आसन छोड कर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह कर के दोनो हाथ जोडकर पचांग नमा कर तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार विधिपूर्वक वदना करना और श्री सीमंधर स्वामी या अपने धर्माचार्यजी (गुरुदेव) की आज्ञा लेकर नमस्कार मत्र', 'इच्छाकारेणं' और 'तस्स

उत्तरी' का पाठ बोल कर काउस्सग्ग करना । काउस्सग्ग मे 'इच्छाकारेण' का पाठ मन मे कहना । पाठ के अन्त मे 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं' के स्थान पर 'तस्स आलोउ'' कहना और 'णमो अरिहताण' कहकर काउस्सग्ग पारना । बाद मे 'नमस्कार मत्र', 'ध्यान का पाठ' (काउस्सग्ग मे आर्त्त-ध्यान रौद्रध्यान ध्याया हो धर्मध्यान शुक्लध्यान न ध्याया हो, काउस्सग्ग मे मन वचन काया चलित हुए हो तस्स मिच्छामि दुक्कडं) और 'लोगस्स' का पाठ कहना । फिर 'करेमि भत्ते' के पाठ से जहां 'जाव नियम' शब्द आता है वहा जितनी[1] सामायिक लेनी हो उतनी सामायिक लेकर आगे का पाठ समाप्त करना । बाद मे नीचे बैठ कर बाया घुटना खडा रख कर दो 'णमोत्थुण' का पाठ बोलना । दूसरे 'णमोत्थुण का पाठ बोलने के समय 'ठाण सपत्ताण' के वदले' 'ठाण मपाविउकामाण' बोलना । यहा सामायिक लेने की विधि पूरी हुई ।

[सामायिक में नया ज्ञान सीखना, सीखे हुए ज्ञान, थोकडा, वोल आदि चितारना, स्वाध्याय करना, परमात्मा के स्तवन, प्रार्थना, स्तोत्र, स्तुति आदि बोलना, माला फेरना आदि ज्ञान-ध्यान करना । आशय यह है कि सामा-यिक का काल प्रमाद-रहित होकर ज्ञान, ध्यान, चिन्तन, मनन मे विताना चाहिए । सन्त मुनिराज विराजते हो तो उनकी ओर पीठ करके नही वैठना चाहिए । स्वाध्याय,

---

१ सामायिक का काल एक मुहूर्त-अडतालीस मिनिट का होता है ।

व्याख्यान या उपदेश दे रहे हो तो उसमे उपयोग रखना चाहिए । सामायिक मे विकार-जनक उपकरण नही रखना चाहिए । सामायिक के ३२ दोषो का सेवन नही करना चाहिए ।]

सामायिक पारने की विधि

सामायिक पारने के समय 'नमस्कार मन्त्र', 'इच्छाकारेण' और 'तस्स उत्तरी' का पाठ बोल कर काउस्सग्ग करना । काउस्सग्ग मे दो बार 'लोगस्स' का पाठ मन मे कहना और 'णमो अरिहंताण कह कर, काउस्सग्ग पारना । फिर 'नमस्कार मन्त्र', 'ध्यान का पाठ' और 'लोगस्स' का पाठ प्रगट कहना । बाद मे बाया घुटना खडा रख कर ऊपर लिखे अनुसार दो बार 'णमोत्थुण' का पाठ बोलना । फिर 'एयस्स नवमस्स' सामायिक पारने का पूरा पाठ बोल कर अन्त मे तीन बार 'नमस्कार मन्त्र' गिन कर सामायिक पारना ।

॥ इति सामायिक सूत्र समाप्त ॥

नमोक्कारसहियं का पच्चक्खाण

उग्गए सूरे नमोक्कारसहियं पच्चक्खामि, चउव्विहंपि आहार असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं वोसिरामि ।

पोरिसिय का पच्चक्खाण

पोरिसियं पच्चक्खामि उग्गए सूरे चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं साहुवयणेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ।

एगासण का पच्चक्खाण

एगासण पच्चक्खामि तिविहंपि आहार असण खाइम साइम, अन्नत्थणाभोगण, सहसागारेण, सागारियागारेण, आउट्टणपसारेण, गुरुअब्भुट्ठाणेण, महत्तरागारेण, सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ।

चउव्विहार उपवास का पच्चक्खाण

सूरे उग्गए अभत्तट्ठ पच्चक्खामि चउव्विहंपि आहार असण पाण खाइम साइम, अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेण, महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ।

रात्रि चउव्विहार का पच्चक्खाण

दिवसचरिम पच्चक्खामि चउव्विहंपि आहार असण पाण खाइम साइम अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेण, महत्तरागारेण, सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ।

तिविहार उपवास का पच्चक्खाण

उग्गए सूरे अभत्तट्ठ पच्चक्खामि तिविहंपि आहार असण खाइम साइम अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेण, महत्तरागारेण, सव्वसमाहिवत्तियागारेण, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा असित्थेण वा वोसिरामि ।

निव्विगई का पच्चक्खाण

उग्गए सूरे निंव्विगइय पच्चक्खामि चउव्विहंपि आहार असण पाण खाइमं साइम अन्नत्थणाभोगेण १. सहसागारेण

की आज्ञा न ली हो कम जगह पूजी हो ज्यादा जगह मे परठा हो परठने के बाद तीन बार वोसरे-वोसरे नही कहा हो । वापस आकर चौविसथव न किया हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

चौबीस तीर्थकरो के नाम

१ श्री ऋषभदेवजी	२ श्री अजितनाथजी
३ श्री सभवनाथजी	४ श्री अभिनन्दनजी
५ श्री सुमतिनाथजी	६ श्री पद्मप्रभुजी
७ श्री सुपार्श्वनाथजी	८ श्री चन्द्राप्रभुजी
९ श्री सुविधिनाथजी	१० श्री शीतलनाथजी
(श्री पुष्पदन्तजी)	११ श्री श्रेयासनाथजी
१२ श्री वासुपूज्यजी	१३ श्री विमलनाथजी
१४. श्री अनन्तनाथजी	१५ श्री धर्मनाथ जी
१६ श्री शातिनाथजी	१७ श्री कुथुनाथजी
१८ श्री अरहनाथजी	१९ श्री मल्लिनाथजी
२० श्री मुनिसुव्रतजी	२१ श्री नमिनाथजी
२२ श्री अरिष्टनेमिजी	२३ श्री पार्श्वनाथजी
२४ श्री महावीर स्वामीजी	(श्री वर्द्धमानस्वामीजी)

११ गणधरों के नाम

१. श्री इन्द्रभूति जी	२. श्री अग्निभूतिजी
३. श्री वायुभूतिजी	४ श्री व्यक्तस्वामीजी
५ श्री सुधर्मास्वामीजी	६ श्री मण्डितपुत्रजी
७ श्री मौर्यपुत्र जी	८. श्री अकपितजी

९ श्री अचलजी
१०. श्री मेतार्यजी
११ श्री प्रभासजी

१६ सतियों के नाम

१. श्री ब्राह्मीजी
२ श्री सुन्दरीजी
३ श्री कौशल्याजी
४ श्री सीताजी
५ श्री राजुलमतिजी
६ श्री कुन्तीजी
७ श्री द्रौपदीजी
८ श्री चन्दनबालाजी
९ श्री मृगावतीजी
१० श्री चूलाजी (श्री पुष्पचूलाजी) (श्री चेलनाजी)
११ श्री प्रभावतीजी
१२ श्री सुभद्राजी
१३ श्री दमयन्तीजी
१४ श्री सुलसाजी
१५ श्री शिवादेवीजी
१६ श्री पद्मावती जी

श्रावक के तीन मनोरथ

श्रावक ऐसी भावना भावे कि—(१) कब वह शुभ समय प्राप्त होगा जब मैं आरम्भ परिग्रह का त्याग करूंगा (२) पांच महाव्रत अंगीकार करूंगा (३) अन्त समय में संलेखना, संथारा का प्रयोग करूंगा।

आरम्भ परिग्रह तजि करि, पंच महाव्रत धार।
अन्त समय आलोयणा, करूं संथारो सार॥

॥ श्री वीतरागाय नम ॥

श्रावक-प्रतिक्रमण-सूत्र

निरवद्य स्थान में प्रतिक्रमण करने की विधि

आसन पर खडे होकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह करके 'शासन पति भगवान महावीर स्वामी को' या वर्तमान मे 'अपने गुरु महाराज को' 'तिक्खुत्तो' के पाठ मे तीन बार वन्दना करके 'चउवीस थव' की आज्ञा लेकर 'चउवीस थव' करे। 'चउवीस थव' मे—नवकार मन्त्र, इच्छाकारेण और तस्स उत्तरी का पाठ बोलकर 'काउस्सग्ग' करे। काउस्सग्ग (ध्यान) मे 'लोगस्स का पाठ' दो बार मन मे कहे। (स्थिर खडे होकर, दोनो हाथ सीधे रखकर दृष्टि को पैर के अगूठे पर रखते हुए।) दो लोगस्स' के पूर्ण होने पर 'णमो अरिहन्ताण' ऐसा प्रगट बोलते हुए ध्यान खोले। फिर नवकार मन्त्र और काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ (पा न ८) बोले। इसके बाद 'एक लोगस्स का पाठ प्रगट बोले। तत्पश्चात् बैठकर 'बाया घुटना' खडा करके 'णमोत्थुण का पाठ' दो बार बोले। दूसरे 'णमोत्थुणं' मे 'ठाण सपत्ताण' के बदले 'ठाण सपाविउ कामाण' कहे।

तत्पश्चात्—'गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके' 'देवसिय प्रतिक्रमण' करने की आज्ञा लेवे। आज्ञा लेकर खडे-खडे 'इच्छामि ण भते' (पा न १) और एक नवकार मन्त्र बोले।

॥ इच्छामि णं भंते का पाठ ? ॥

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहि अब्भणुण्णाए समाणे 'देवसियं' पडिक्कमणं ठाएमि, देवसिय-णाण-दंसण-चरित्ता-चरित्त तव-अइयार-चितणत्थं करेमि काउस्सग्गं ।

॥ श्री वीतरागाय नम ॥

श्रावक-प्रतिक्रमण-सूत्र

निरवद्य स्थान में प्रतिक्रमण करने की विधि

आसन पर खडे होकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुह करके 'शासन पति भगवान महावीर स्वामी को' या वर्तमान मे 'अपने गुरु महाराज को' 'तिक्खुत्तो' के पाठ से तीन बार वन्दना करके 'चउवीस थव' की आज्ञा लेकर 'चउवीस थव' करे। 'चउवीस थव' मे—नवकार मन्त्र, इच्छाकारेण और तस्स उत्तरी का पाठ बोलकर 'काउस्सग्ग' करे। काउस्सग्ग (ध्यान) मे 'लोगस्स का पाठ' दो बार मन मे कहे। (स्थिर खडे होकर, दोनो हाथ सीधे रखकर दृष्टि को पैर के अगूठे पर रखते हुए।) दो लोगस्स' के पूर्ण होने पर 'णमो अरिहन्ताण' ऐसा प्रगट बोलते हुए ध्यान खोले। फिर नवकार मन्त्र और काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ (पा न ८) बोले। इसके बाद 'एक लोगस्स का पाठ प्रगट बोले। तत्पश्चात् बैठकर 'बाया घुटना' खडा करके 'णमोत्थुण का पाठ' दो बार बोले। दूसरे 'णमोत्थुणं' मे 'ठाण सपत्ताण' के बदले 'ठाण सपाविउ कामाण' कहे।

तत्पश्चात्—'गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके' 'देवसिय प्रतिक्रमण' करने की आज्ञा लेवे। आज्ञा लेकर खडे-खडे 'इच्छामि ण भते' (पा न १) और एक नवकार मन्त्र बोले।

।। इच्छामि णं भंते का पाठ १ ।।

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्-णाए समाणे 'देवसियं' पडिक्कमणं ठाएमि, देवसिय-णाण-दंसण-चरित्ता-चरित्त तव-अइयार-चिंतणत्थं करेमि काउस्सग्गं ।

विधि—तत्पश्चात्–गुरुदेव को 'तिक्खुत्तो' के पाठ से वन्दना करके 'प्रथम आवश्यक' की आज्ञा लेवे। पहले 'सामायिक आवश्यक' मे खडे-खडे—नवकार मन्त्र, करेमि भते और 'इच्छामि ठामि (पा न २) की पाटी बोले। इसके बाद तस्स उत्तरी की पाटी बोलकर 'काउस्सग्ग' करे। काउस्सग्ग मे ९९ अतिचार की पाटिया अर्थात् आगमे तिविहे (पाठ न ३), दर्शन सम्यक्त्व (पा न ४), बारह व्रतो के अतिचार (पाठ न ५), छोटी सलेखना (पा न ६), अठारह पाप स्थान (पा न ७) और इच्छामि ठामि (पा न २) मन मे कहे। काउस्सग्ग मे सभी पाटियो के अन्त मे 'मिच्छामि दुक्कड' के बदले 'आलोउ' कहे। फिर 'णमो अरिहन्ताण' ऐसा प्रगट कहकर ध्यान खोले। बाद मे नवकार मन्त्र और काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ (पा न ८) बोले। यहा पहला **'सामायिक आवश्यक'** समाप्त हुआ।

॥ इच्छामि ठामि का पाठ २ ॥

***इच्छामि ठाइउं काउस्सग्गं जो मे देवसिओ अइयारो कओ, काइओ, वाइओ, माणसियो, उस्सुत्तो,** उम्मग्गो, अकप्पो, अकरणिज्जो, दुज्झाओ, दुव्विचिंतिओ, अणायारो, अणिच्छि-अव्वो, असावग-पाउग्गो, णाणे तह दंसणे, चरित्ता-चरित्ते, सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्ह-मणुव्वयाणं, तिण्हं गुण-व्वयाणं, चउण्हं सिक्खा-वयाणं, बारह-विहस्स सावग-धम्मस्स जं खंडियं, जं विराहियं जो मे 'देवसिओ' अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

॥ आगमे तिविहे (ज्ञान के अतिचारों) का पाठ ३ ॥

आगमे तिविहे पण्णत्ते, तंजहा—सुत्ता - गमे, अत्था गमे, तदुभया—गमे, इस तरह तीन प्रकार आगम-रूप ज्ञान के विषय जो कोई अतिचार

---

*(टिप्पण—कायोत्सर्ग (काउस्सग्ग) के पहले 'इच्छामि ठाइउ काउस्सग्ग' और 'काउस्सग्ग' मे इच्छामि आलोउ' तथा अन्य स्थानो पर 'इच्छामि पडिक्कमिउ' बोलना चाहिए।)

लगा हो तो आलोउं । जं वाइद्धं वच्चा-मेलियं, हीणक्खरं, अच्चक्खरं, पय-हीणं, विणय-हीणं, जोग-हीणं, घोस-हीणं, सुट्ठु दिण्ण, दुट्ठु-पडिच्छियं, अकाले कओ सज्झाओ, काले न कओ सज्झाओ, असज्झाए सज्झाइय, सज्झाए न सज्झाइयं, भणतां गुणतां विचारता ज्ञान और ज्ञानवंत पुरुषो की अविनय आशातना की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

।। दर्शन सम्यक्त्व का पाठ ४ ।।

अरिहन्तो मह देवो जावज्-जीवाए सुसाहुणो गुरुणो ।
जिण-पण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ।।१।।

परमत्थ-संथवो वा, सुदिट्ठ-परमत्थ-सेवणा वावि ।
वावण्ण-कुदसण-वज्जणा, य सम्मत्त-सद्दहणा ।।२।।

इअ समत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा, तंजहा ते आलोउं—शंका, कखा, विति-गिच्छा, पर-पासंड पसंसा, पर-पासंड-संथवो, इस प्रकार श्री समकित-रत्न पदार्थ के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ वीतराग के वचन मे शंका की हो, २ परदर्शन की आकांक्षा

की हो, ३ धर्म के फल मे सन्देह किया हो, ४ पर-पाखण्डी की प्रशंसा की हो, ५ पर-पाखण्डी का परिचय किया हो, मेरे सम्यक्त्व-रूप रत्न पर मिथ्यात्व रूपी रज मैल लगा हो, जो मे 'देवसिओ' अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

॥ बारह व्रतो के अतिचार ५ ॥

१ पहला स्थूल प्राणाति-पात विरमण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं- १ रोषवश गाढ़ा बन्धन बाँधा हो, २गाढ़ा घाव घाला हो, ३ अवयव (चाम आदि) का छेद किया हो, ४ अधिक भार भरा हो, ५ भात पानी का विच्छेद किया हो, जो मे❀देवसिंओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं अर्थात् जो मैने दिवस सम्बन्धी अतिचार किया हो तो उससे उत्पन्न हुआ मेरा पाप निष्फल हो ।

(टिप्पण—प्रतिदिन शाम को प्रतिक्रमण मे 'देवसियो' सुबह के प्रतिक्रमण मे 'रायसी' पाक्षिक (पक्खी के) प्रतिक्रमण मे 'पक्खिओ' चौमासी प्रतिक्रमण मे 'चउम्मासिओ' और 'सवत्सरी' प्रतिक्रमण मे 'सवच्छरिओ' बोलना चाहिए ।

२ दूजा स्थूल मृषावाद-विरमण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१ सहसाकार से किसी के प्रति कूड़ा आल (झूठा दोष) दिया हो, २ एकान्त में गुप्त बात-चीत करते हुए व्यक्तियो पर झूठा आरोप लगाया हो, ३ अपनी स्त्री के मर्म (गुप्त बात) प्रकाशित किये हो, ४ मृषा (झूठा) उपदेश दिया हो, ५ झूठा लेख लिखा हो, जो मे 'देवसिओ' अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

३ तीजा स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१ चोर की चुराई हुई वस्तु ली हो, २ चोर को सहायता दी हो, ३ राज्य-विरुद्ध काम किया हो, ४ कूड़ा तोल कूड़ा माप किया हो, ५ वस्तु मे भेल-सम्भेल की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

४ चौथा स्थूल※स्वदार सतोष परदार-विवर्जन-रूप मैथुन विरमण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-※१ इत्तरिय-परिग्गहिया से

गमन किया हो, २ अपरिग्गहिया से गमन किया हो, ३ अनङ्ग क्रीड़ा की हो, ४ पराये का विवाह कराया हो, ५ काम-भोग की तीव्र अभिलाषा की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

※स्त्री को स्वपतिसतोष पर-पुरुप-विवर्जनरूप बोलना चाहिए।

※शका "परा' स्वस्त्रिओ भिन्ना –दारा परदारा. तेषा विवर्जन परदार विवर्जन" अर्थात् अपनी विवाहिता स्त्री से भिन्न सब स्त्रिया पर-स्त्री है । उन सब का त्याग करना परस्त्री त्याग कहलाता है । इस व्याख्या से वेश्या, विधवा, पासवान, कन्या आदि परस्त्री है । फिर उनके सेवन को यहा "अनाचार न कहकर अतिचार क्यो कहा है ?

उत्तर–उपासक दशाङ्ग की टीका मे लिखा है—'अतिचारतोऽस्यातिक्रमादिभि' अर्थात् इत्तरिय-परिग्गहिया–गमण को और अपरिग्गहिया गमण को यहा जो अतिचार कहा है, सो अतिक्रमण आदि की अपेक्षा से है । तात्पर्य यह है कि अतिक्रम, व्यतिक्रम और अतिचार से व्रत एकदेश खडित होता है और अनाचार से सर्वथा भग हो जाता है । परस्त्री सेवन का सकल्प करना अतिक्रम है,उद्योग करना व्यतिक्रम है और आलाप,सलाप आदि करना अतिचार है । यहा अतिचार का प्रकरण है, अत इत्तरिय-परिग्गहिया-गमण का अतिचार रूप अर्थ यह है—"थोडे काल के लिए अपनी वनाने के लिए तथा अल्पवय वाली अर्थात् जिसकी उम्र अभी भोग योग्य नही हुई है, ऐसी अपनी विवाहिता स्त्री से गमन करने के लिए

आलाप, संलाप आदि करना" तथा अपरिग्गहिया-गमण का अतिचार रूप अर्थ है—'वेश्या आदि के साथ रमण करने के लिए तथा जिस कन्या के साथ सगाई तो हो चुकी है किन्तु अभी विवाह नही हुआ है, ऐसी कन्या के साथ गमन करने के लिए आलाप, सलाप आदि करना, सुई डोरा के न्याय से सेवन करने पर व्रत सर्वथा भग हो जाता है। इसलिए इन अतिचारो से बचने के लिए वेश्या, पासवान, विधवा आदि किसी भी परस्त्री के साथ एकान्त मे या दुष्ट भाव से आलाप, सलाप आदि नही करना चाहिए, न मार्ग मे साथ चलना चाहिए।"

जहा-२ स्त्री शब्द आया है, वहा-२ स्त्रियों को 'पुरुष' शब्द बोलना और समझना चाहिए। क्योकि पुरुष का त्याग करना स्त्री के लिए और स्त्री का त्याग करना पुरुष के लिए "मैथुन" विरमण व्रत कहलाता है।

*अपरिग्गहिया—अपरिग्रहीता के साथ गमन (मैथुन) किया हो, ऐसा पुरुष को बोलना चाहिए तथा स्त्री को इत्तरिय-परिग्गहिय—इत्वर परिग्रहीत (थोडे काल के लिए पतिरूप स्वीकार किया हुआ) और अपरिग्गहिय-अपरिग्रहीता (पतिरूप स्वीकार नही किये हुए जार वगैरह) पुरुष से गमन किया हो, ऐसा बोलना चाहिए।

५ पाचवां स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१ खेत्त वत्थु का परिमाण अतिक्रमण किया हो, २ हिरण्य-सुवर्ण

का परिमाण अतिक्रमण किया हो, ३ धन-धान्य का परिमाण अतिक्रमण किया हो, ४ दोपद-चौपद का परिमाण अतिक्रमण किया हो, ५ कुविय धातु (कांसी, पीतल, तांबा लोहा आदि धातु का तथा इनसे बने हुए बर्त्तन आदि और शय्या, आसन, वस्त्र आदि घर सम्बन्धी वस्तुओं) का परिमाण अतिक्रमण किया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

६ छठे दिशिव्रत के विषय में जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ ऊंची दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो, २ नीची दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो, ३ तिरछी दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो, ४ क्षेत्र बढ़ाया हो, ५ क्षेत्र का परिमाण भूल जाने से, पंथ का सदेह पड़ने पर आगे चला हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

७ सातवां उपभोग-परिभोग—परिमाण व्रत के विषय णो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ पच्चक्खाण उपरान्त सचित्त का आहार किया हो, २ सचित्त पडिवद्ध का आहार किया हो, ३ अप-

क्व का आहार किया हो, ४ दुष्पक्व का आहार किया हो, ५ ❂तुच्छौ-षधि का आहार किया हो जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

पन्द्रह ❀कर्मादान सम्बन्धी जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ इंगाल-कम्मे, २ वण-कम्मे, ३ साडी-कम्मे, ४ भाडी-कम्मे, ५ फोडी-कम्मे, ६ दन्त-वाणिज्जे, ७ लक्ख-वाणिज्जे, ८ रस-वाणिज्जे, ९ केस-वाणिज्जे, १० विस-वाणिज्जे, ११ जंत-पीलण-कम्मे, १२ निल्लछण-कम्मे, १३ दवग्गि-दावणया, १४ सरदह-तलाय-सोसणया, १५ असई-जण-पोसणया जो मे देव-सिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

८ आठवें अनर्थदण्ड-विरमणव्रत के विषय मे जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ कामविकार

टिप्पन-❂जिसमे खाने योग्य अश थोडा हो और अधिक फेकना पडे उसे तुच्छौ-षधि कहते हैं जैसे मूग की कच्ची फली, सीताफल, गन्ना (गडेरी) आदि ।

टिप्पन—❀अधिक हिंसा वाले धन्धो से आजीविका चलाना कर्मादान है अथवा जिन धन्धो से उत्कट (भारी) ज्ञानावरणीय आदि कर्मो का वन्ध होता है, उन्हे कर्मादान कहते हैं । ये श्रावक के जानने योग्य है किन्तु आचरण करने योग्य नही है ।

पैदा करने वाली कथा की हो, २ भंड कुचेष्टा की हो, ३ मुखरी वचन बोला हो, ४ अधिकरण यानी हिंसाकारी उपकरणों का संग्रह किया हो, ५ उपभोग-परिभोग अधिक बढ़ाया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

९ नवें सामायिक व्रत के विषय जो कोई अति-चार लगा हो तो आलोउं—१-३ मन, वचन और काया के अशुभ योग प्रवर्ताये हो, ४ सामायिक की स्मृति न की हो, ५ समय पूर्ण हुए बिना सामायिक पारी हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

१० दसवें देशावकाशिक व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ नियमित सीमा के बाहर की वस्तु मंगवाई हो, २ भिजवाई हो, ३ शब्द करके चेताया हो, ४ रूप दिखा कर अपने भाव प्रगट किये हो, ५ कङ्कर आदि फेंक कर दूसरे को बुलाया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

११ ग्यारहवें प्रतिपूर्ण पौषध व्रत के विषय जो

कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ पौषध मे शय्या-संथारा न देखा हो या अच्छी तरह से न देखा हो, २ प्रमार्जन न किया हो या अच्छी तरह से न किया हो, ३ उच्चार-पासवण की भूमि को देखी न हो अथवा अच्छी तरह से न देखी हो, ४ पूंजी न हो या अच्छी तरह से न पूंजी हो, ५ उपवास-युक्त पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन न किया हो जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

१२ बारहवें अतिथि-संविभाग व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—१ अचित्त वस्तु सचित्त पर रखी हो, २ अचित्त वस्तु सचित्त से ढाकी हो, ३ साधुओ को भिक्षा देने के समय को टाल दिया हो, ४ दान नही देने की बुद्धि से अपनी वस्तु दूसरे की कही हो,५ ईर्ष्या भाव से दान दिया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ सलेखना के अतिचारो का पाठ ६ ॥

अपच्छिम मारणंतिय संलेहणा झूसणा आराहाणाए पंच-अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं—इह-लोगा-संसप्-पओगे, पर-लोगा-

संसट्ठ-पओगे, जीविया-संसप्पओगे, मरणा-संसप्पओगे, कामभोगा ससप्पओगे जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ अठारह पापस्थान का पाठ ७ ॥

अठारह पापस्थान आलोउं—पहला प्राणातिपात, दूजा मृषावाद, तीजा अदत्ता-दान, चौथा मैथुन, पांचवा परिग्रह, छठा क्रोध, सातवा मान, आठवां माया, नवां लोभ, दसवा राग, ग्यारहवां द्वेष, बारहवां कलह, तेरहवा अभ्याख्यान, चौदहवां पैशुन्य, पन्द्रहवां पर-परिवाद, सोलहवां रति-अरति, सतरहवा माया-मृषावाद, अठारहवां मिथ्या-दर्शन-शल्य, इन अठारह पाप स्थानों मे से किसी का सेवन किया हो, सेवन कराया हो और सेवन करते हुए को भला जाना हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ ८ ॥

काउस्सग्ग मे आर्त्त-ध्यान, रौद्र-ध्यान ध्याया हो, धर्म-ध्यान शुक्ल-ध्यान न ध्याया हो तथा काउस्सग्ग में मन, वचन, काया चलित हुए हो जो मे 'देवसिओ' अइ-यारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

विधि—तत्पश्चात् गुरुदेव को 'तिक्खुत्तो' के पाठ से वन्दना करके 'दूसरे-आवश्यक' की आज्ञा लेवे। दूसरे 'चउ-वीस-थव-आवश्यक' मे 'एक लोगस्स' का पाठ प्रगट बोले खडे-खडे ।

विधि—तत्पश्चात् गुरुदेव को 'तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके 'तीसरे आवश्यक' की आज्ञा लेवे । तीसरे 'वन्दना' आवश्यक मे 'इच्छामि खमा-समणो (पाठ न. ९ विधिपूर्वक दो बार कहना ।

[इच्छामि खमासमणो से वन्दना देने की विधि-खडे-खडे पा न ९ बोले, निसीह-आए' पद जहा आवे, तब बैठकर दोनो घुटने खडे रखकर दोनो हाथ जोडकर मस्तक नमाकर आगे का पाठ बोले । 'अहो काय काय' इन छह अक्षरो का उच्चारण करते समय तीन आवर्त्तन करें । दोनो हाथ जोट, लम्बे कर दसो अगुलियो से गुरु महाराज के चरण स्पर्श कर या चरण स्पर्श की भावना से दसो अगुलिया भूमि पर लगा कर मन्द स्वर से 'अ' अक्षर का उच्चारण करे और फिर दसो अगुलिया मस्तक पर लगाते हुए 'हो ऊचे स्वर से कहे । इस प्रकार दोनो अक्षर कहने से पहला आवर्त्तन हुआ । इसी विधि से 'का' और 'य' इन दोनो अक्षरो का उच्चारण करने से दूसरा आवर्त्तन हुआ और इसी विधि से 'का' और 'य' इन दोनो अक्षरो का उच्चा-रण करने से तीसरा आवर्त्तन होता है । इसी तरह 'जत्ता भे जवणिज्ज च भे' इन अक्षरो का उच्चारण करते हुए तीन आवर्त्तन करे । ऊपर लिखे अनुसार दोनो हाथ जोड लम्बे कर, दसो अगुलियो से गुरु महाराज के चरण स्पर्श कर अथवा चरण स्पर्श की भावना से दसो-अगुलिया भूमि

पर लगाकर 'ज' अक्षर मन्द स्वर से कहे फिर 'त्ता' अक्षर मध्यम स्वर से और दसो अ गुलिया मस्तक पर लगाकर 'भे' अक्षर ऊचे स्वर से कहे। इस प्रकार 'जत्ता भे' ये तीन अक्षर बोलने से पहला आवर्त्तन हुआ। इसी विधि से 'ज' 'व' 'णि' इन तीनो अक्षरो का उच्चारण क्रमश मन्द, मध्यम और उच्च स्वर से करने से दूसरा आवर्त्तन होता है। 'ज्ज' 'च' 'भे' का भी इसी विधि से मन्द, मध्यम और उच्च स्वर से उच्चारण करने से तीसरा आवर्त्तन होता है। इस तरह ३+३=६ आवर्त्तन हुए। जहा 'तित्ति-सन्न-यराए' शब्द आवे, वहा खड़े हो जाए और खड़े होकर शेष पाठ पूरा करे। इसी विधि से 'इच्छामि खमासमणो' का पाठ दूसरी बार भी बोले। यह पाठ बोलते समय भी ऊपर लिखे अनुसार छ आवर्त्तन करे। किन्तु इस बार 'आवस्सि'-याए' पद नही बोले और तित्ती-सन्न-यराए' शब्द आने पर खडा न होकर बैठे हुए ही पाठ समाप्त करे। इस तरह तीसरा 'वन्दना-आवश्यक' समाप्त हुआ।]

॥ इच्छामि खमो-समणो का पाठ ९ ॥

इच्छामि खमासमणो वंदीउं जाव-णिज्जाए निसी-हिआए अणु-जाणह मे मिउग्गहं निसीहि अहो-कायं काय-संफासं खमणिज्जो भे किलामो अप्प-किलंताणं बहु सुभेणं मे दिवसो वइक्कंतो जत्ता भे जवणि-ज्जं च भे ! खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कमं आव-स्सियाए पडिक्कमामि। खमा-समणाणं देवसिआए

आसाय-णाए तित्ती-सन्न-यराए जं किंचि मिच्छाए मण-दुक्कडाए वय-दुक्कडाए काय-दुक्कडाए कोहाए माणाए मायाए लोहाए सव्व-कालि-आए सव्व-मिच्छो-वयाराए सव्व-धम्माइक्क-कमणाए आसायणाए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स खमासमणो ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

विधि—पत्पश्चात् गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके 'चौथे आवश्यक' की आज्ञा लेवे ।

चौथे 'प्रतिक्रमण-आदश्यक' मे खडे होकर ९९ अति-चार की पाटिया (अर्थात्—पा न ३, ४, ५, ६, ७ और २) प्रगट वोले, सभी पाटियो के अन्त मे 'तस्स मिच्छामि दुक्कड' कहे । फिर 'समुच्चय का पाठ' (पाठ न १०) और तस्स सव्वस्स का पाठ (पाठ न ११) वोले ।

॥ समुच्चय का पाठ १० ॥

इस प्रकार १४ ज्ञान के, ५ दर्शन (सम्यक्त्व) के, ६० वारह व्रतो के, १५ कर्मादान के, ५ सलेखना के इन ९९ अतिचारो मे से किसी भी अतिचार का, जानते-अजा-नते, मन, वचन, काया से, मेवन किया हो, कराया हो और करते हुए को भला जाना हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

॥ तस्स सव्वस्स का पाठ ११ ॥

तस्स सव्वस्स देवसियस्स अइयारस्स दुब्भासिय दुच्चिंतिय दुच्चिट्ठियस्स आलोयन्तो पडिक्कमामि ।

विधि—तत्पश्चात् गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके "श्रावक-सूत्र" की आज्ञा लेवे ।

श्रावक सूत्र की आज्ञा लेकर 'दाहिना घुटना ऊचा रखकर बैठे । फिर नवकार मन्त्र, करेमि भन्ते और चत्तारि मगल (पा न १२) बोले इसके बाद इच्छामि ठामि (पा न २), इच्छाकारेण, आगमे तिविहे (पा न ३) दसण समकित (पा न १३) और बारह व्रतो के अतिचार सहित पाठ (पा न. १४) बोले ।

इसके बाद मे "पालखी" लगाकर बैठे और "बडी सलेखना का पाठ" (पा न, १५) बोले फिर (इस तरह समकित पूर्वक बारह व्रत, बडी सलेखना सहित इनके विषय जो कोई अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार, जानते-अजानते मन, वचन, काया से पाप दोप लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड कहकर) अठारह पाप स्थान (पा. न ७) और इच्छामि ठामि (पा न २) बोले । फिर खडे होकर "तस्स धम्मस्स" का पाठ (पा. न. १६) बोले। और ऊपर लिखी विधि से दो बार "इच्छामि खमासमणो" (पा. न. ६) बोले ।

॥ चत्तारि मंगल का पाठ १२ ॥

चत्तारि मंगलं ✲अरिहंता मंगलं, सिद्धा मगलं, साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगल । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि-सरणं पवज्जामि, अरिहन्ते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरण पवज्जामि ।

अरिहन्तो का शरणा, सिद्धो का शरणा, साधुओ का शरणा, केवलि-प्ररूपित धर्म का शरणा ।

चार शरणा दुःख हरणा, और न शरणा कोय ।
जो भवि प्राणी आदरे, अक्षय अमर पद होय ॥

✲(टिप्पन 'मागलिक' गुरु मे या वडे श्रावक मे सुने वे न होने पर खुद पा न १२ को वोल ले)

॥ दसण समकित का पाठ १३ ॥

दंसण-सम्मत्त-परमत्थ-संथवो वा,
सुदिट्ठ-परमत्थ-सेवणा वावि ।

वावण्ण-कुदंसण-ववज्जा,

य सम्मत्त सद्द-हणा ॥

एवं समणो-वासएणं सम्मत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जाणि-यव्वा, न समा-यरि-यव्वा, तंजहा ते आलोउं संका, कंखा, विति-गिच्छा, पर-पासंड-पसंसा-पर-पासंड-संथवो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ बारह व्रतों के अतिचार सहित पाठ १४ ॥

पहला अणुव्रत-थूलाओ पाणाइ-वायाओ वेरमणं त्रस जीव बेइं-दिय,तेइं-दिय, चउ-रिंदिय,पंचेंदिय,जान के पहिचान के संकल्प करके उसमें स्व-सम्बन्धी शरीर के भीतर में पीड़ाकारी,सापराधी को छोड़ निरपराधी को (आकुट्टी) हनने की बुद्धि से हनने का पच्चक्खाण, जावज्-जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा ऐसे पहले स्थूल प्राणाति-पात वेरमण व्रत के पंच अइयारा पेयाला जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं—बंधे, वहे छवि-च्छेए, अइ-भारे, भत्त-पाण-विच्छेए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

दूजा अणुव्रत थूलाओ मुसा-वायाओ वेरमणं, कन्ना-लीए, गोवा-लिए, भोमा-लीए, णासा-वहारो (थापण-मोसो) कूड-सक्खिजे (कूडी साख) इत्यादिक मोटा झूठ बोलने का पच्चक्-खाण, जावज्-जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा एवं दूजा स्थूल मृषावाद वेरमण व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा, तजहा ते आलोउ -सह-सब्भक्खाणे, रहस्सब्भक्खाणे, सदार-मन्त-भेए, मोसो-वएसे कूडलेह-करणे जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

तीजा अणु-व्रत थूलाओ अदिण्णा-दाणाओ वेरमणं खात खन कर, गाठ खोलकर, ताले पर कुंची लगा कर, मार्ग में चलते को लूट कर, पड़ी हुई धणियाती मोटी वस्तु जान कर लेना इत्यादि मोटा अदत्ता-दान का पच्चक्-खाण, सगे सम्बन्धी, व्यापार सम्बन्धी तथा पड़ी निर्भ्रमी वस्तु के उपरात अदत्ता-दान का पच्चक्-खाण जावज्-जीवाए दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं तीजा स्थूल अदत्तादान वेरमण व्रत के पच अइयारा जाणियव्वा न समा-यरि-यव्वा, तजहा ते आलोउं-तेना-हडे, तक्कर-

प्प-ओगे, विरुद्ध-रज्जाइक्क-क्कमे, कूड-तुल्ल-कूड-माणे, तप्पडि-रूवग-ववहारे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

चौथा अणु-व्रत थूलाओ मेहुणाओ वेरमणं*सदार-संतोसिए, अवसेस-मेहुण-विहिं पच्चक्खामि, जावज्-जीवाए देव देवी सम्बन्धी दुविह तिविहेणं-न करेमि न, कारवेमि, मणसा,वयसा,कायसा तथा मनुष्य तिर्यञ्च सम्बन्धी एगविह एगविहेणं-न करेमि कायसा एवं चौथा स्थूल स्वदार सतोष, परदार विवर्जन रूप मैथुन वेरमण व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तजहा ते आलोउं-इत्तरिय-परिग-गहिया-गमणे, अपरिग-गहिया-गमणे अनंग-क्रीडा, पर-विवाह-करणे, कामभोग-तिव्वा-भिलासे, जो मे देवसियो अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

*(टिप्पन--स्वदार सतोप ऐसा पुरुप को वोलना चाहिए, और स्त्री को 'स्वपति सतोप' ऐसा वोलना चाहिए, जिसको सर्वथा प्रकार से 'मैथुन' सेवन का त्याग हो उसको 'सदार सन्तोसिए अवसेस मेहुण-विहिं' के स्थान पर 'सव्वप्प-गार मेहुण' वोलना चाहिए ।)

पाचवा अणु-व्रत थूलाओ परिग-गहाओ वेरमणं खेत्तवत्थु का यथा परिमाण, हिरण्ण सुवण्ण का यथा

परिमाण, धन-धान्य का यथा परिमाण, दुपय चउप्पय का यथा परिमाण, कुविय धातु का यथा परिमाण, जो परिमाण किया है उसके उपरात अपना करके परिग्रह रखने का पच्चक्-खाण, जावज्-जीवाए एगविहं तिविहेणं न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं पांचवां स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं-खेत्त-वत्थु-प्पमाणाइ-क्कमे, हिरण्ण-सुवण्ण-प्पमाणऽइक्-कमे, धण-धण्ण-प्पमाणा-इक्-कमे, दुपय-चउप्पय-प्पमाणाइक्-कमे, कुविय-प्पमाणाइक्-कमे जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

छठा दिशि-व्रत उड्ढ-दिसि का यथा परिमाण अहो-दिसि का यथा परिमाण, तिरिय-दिसि का यथा परिमाण एवं यथा परिमाण किया है, उसके उपरांत स्वेच्छा काया से आगे जाकर पांच आश्रव सेवन का पच्चक्-खाण, जावज्-जीवाए एगविह* तिविहेणं न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं छठे दिशिव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समा-यरि-यव्वा-तंजहा ते आलोउं—उड्ढ-दिसि-प्पमाणाइक्-कमे, अहो-दिसि-प्पमाणाइक्-कमे, तिरिय-दिसि-प्पमाणाइक्-कमे खित्त-

वुड्ढी-सइ अन्त-रद्धा जो मे देवसियो अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

(टिप्पण—⁕एगविह तिविहेण न करेमि' की जगह कोई-२ दुविह तिविहेण न करेमि न कारवेमि' ऐसा बोलते है ।)

सातवाँ व्रत उवभोग-परिभोग-विहिं पच्चक्खाय-माणे १ उल्ल-णिया-विहि, २दंतण-विहि, ३ फल-विहि, ४ अब्भंगण-विहि ५ उवट्टण-विहि, ६ मज्जण-विहि, ७ वत्थ-विहि, ८ विलेवण-विहि, ९ पुप्फ-विहि, १० आभरण-विहि, ११ धूव-विहि, १२ पेज्ज-विहि, १३ भक्खण-विहि, १४ ओदण-विहि, १५ सूप-विहि, १६ विगय-विहि, १७ साग-विहि, १८ माहुर-विहि, १९ जीमण-विहि, २० पाणीय-विहि, २१ मुखवास-विहि, २२ वाहण-विहि, २३ उवाहण-विहि, २४ सयण-विहि, २५ सचित्त-विहि, २६ दव्व-विहि इन २६ बोलों का यथा परिमाण किया है, इसके उपरांत उवभोग परिभोग वस्तु को भोग निमित्त से भोगने का पच्चक्-खाण, जावज्-जीवाए एगविहं तिविहेणं न करेमि मणसा, वयसा, कायसा एवं सातवां उवभोग परि-भोग दुविहे-पण्णत्ते तंजहा-भोय-णाओ य, कम्मओ

य भोयणाओ समणो-वासए णं पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा, तंजहा ते आलोउं–सचित्ता-हारे, सचित्त-पडि-बद्धा-हारे, अप्प-उलि-ओसहि-भक्ख-णया, दुप्पउलि ओसहि भक्ख-णया, तुच्छो-सहि-भक्ख-णया, कम्मओ य णं समणो वास-एणं पण्ण-रस कम्मा-दाणाइं जाणि-यव्वाइं समा-यरि-यव्वाइं तंजहा ते आलोउं–इंगाल-कम्मे, वण-कम्मे, साडी कम्मे, भाडी-कम्मे, फोडी-कम्मे, दंत-वाणिज्जे, लक्ख-वाणिज्जे, रस-वाणिज्जे, केस-वाणिज्जे, विस-वाणिज्जे, जंत पीलण-कम्मे, निल्लंछण-कम्मे, दवग्गि-दाव-णया सरद्दह-तलाय-सोस-णया, असई-जण-पोस–णया जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

आठवां अणट्ठा-दण्ड विरमण व्रत चउव्विहे अणट्ठा-दंडे पण्णत्ते, तंजहा अवज्-झाणा-यरिए, पमाया-यरिए, हिंस-प्पयाणे, पावक-कमो-वएसे एवं आठवां अणट्ठा-दंड सेवन का पच्चक्-खाण (जिसमें आठ आगार-आए वा राए वा, नाए वा, परिवारे वा, देवे वा, नागे-वा, जक्खे वा, भूए वा, एत्ति-एहिं आगारेहिं अण्णत्थ) जावज्-जीवाए दुविहं तिविहेणं-न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं आठवां

अणट्ठादंडं विरमण व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं-कंदप्पे, कुक्कु-इए मोह-रिए, संजुत्ताहि-गरणे उवभोग परि-भोगा-इरित्ते जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

नवमा सामायिक व्रत सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव-नियमं पज्जुवा-सामि दुविहं तिविहेणं न करेमि-न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा ऐसी मेरी सद्-हणा प्ररूपणा तो है सामायिक का अवसर आये सामायिक करूं, तब फरसना करके शुद्ध होऊं एवं नवमें सामायिक व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं मणदु-पणि-हाणे, वय-दुप्पणि-हाणे, काय दुप्पणि-हाणे समाइ-यस्स सइ, अकर-णया, समाइ-यस्स, अणवट्ठि-यस्स करणया जो मे देवसियो अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

दसवां देसावकासिक व्रत दिन-प्रतिदिन प्रभात से प्रारम्भ करके पूर्वादिक छहों दिशा में जितनी भूमिका की मर्यादा रखी हो उसके उपरान्त आगे जाने का तथा दूसरों को भेजने का पच्चक्खाण जाव

अहोरत्त दुविह तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा तथा जितनी भूमिका की हद रखी है, उसमे जो द्रव्यादिक की मर्यादा की है, उसके उपरांत उपभोग-परिभोग निमित्त से भोगने का पच्चक्-खाण जाव अहोरत्तं एगविहं तिविहेणं न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं दसवें देसाव-कासिक व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं आण-वण-पओगे, पेस वण-पओगे, सद्दाणु-वाए, रूवाणु-वाए, बहिया-पुग्गल-पक्खेवे जो मे देव-सिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

ग्यारहवा पडिपुण्ण पौषध व्रत असणं पाणं खाइमं साइमं का पच्चक्खाण, अबभ सेवन का पच्चक्खाण, अमुक मणि सुवर्ण का पच्चक्खाण, माला-वन्नग-विले-वण का पच्चक्खाण, सत्थमुसलादिक सावज्ज जोग सेवन का पच्चक्खाण जाव अहोरत्तं पज्जुवा-सामि दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा ऐसी मेरी सद्दहणा प्ररूपणा तो है, पौषध का अवसर आये पौषध करूं तब फरसना करके शुद्ध होऊं एव ग्यारहवें प्रतिपूर्ण पौषध व्रत के पच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं–

अप्पडि-लेहिय दुप्पडि लेहिय सेज्जा-संथा-रए, अप्प-मज्जिय दुप्प-मज्जिय सेज्जा-संथारए, अपडि-लेहिय, दुप्पडि-लेहिय उच्चार-पासवण-भूमि, पोसहस्स सम्म अणणु-पाल-णया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

बारहवां अतिथि-संविभाग-व्रत समणे णिग्गंथे फासुय-एस-णिज्जेणं असणं पाण खाइमं साइमं वत्थ-पडिग्गह कम्बल-पाय-पुंच्छ-णेणं, पडि-हारिय-पीढ-फलग-सेज्जा-संथा-रएणं, ओसह-भेस-ज्जेणं, पडि-लाभे-माणे विहरामि ऐसी मेरी सद्द-हणा प्ररूपणा तो है, साधु-साध्वी का योग मिलने पर निर्दोष दान दूं तब फरसना करके शुद्ध होऊं । एवं बारहवें अतिथि संविभाग व्रत के पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं सचित्त-निक्खे-वणया, सचित्त-पिहणया, कालाइक्-कमे, परवव-एसे, मच्छरि-आए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ बडी सलेखना का पाठ १५ ॥

अह भंते अपच्छिम-मार-णांतिय-संलेहणा झूसण

आराहणा पौषध शाला पूजे, पूंज के उच्चार पास-वण भूमि का पडिलेहे, पडिलेह के गमणा-गमणे पडिक्कमे, पडिक्-कम के दर्भादिक सथारा सथारे, संथार के दर्भादिक सथारा दुरूहे, दुरूह के पूर्व तथा उत्तर दिशि सन्मुख पल्यका-दिक आसन से वैठे, वैठ के करयल संपरिग्-गहिय सिरसा वत्तं मत्थए अंजलि कट्टु एवं वयासि 'णमोत्थुणं अरिहत्ताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं' ऐसे अनन्त सिद्ध भगवान को नमस्कार करके 'नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवन्ताणं जाव संपा-विउ-कामाणं, जयवन्ते वर्तमान काले महा-विदेह क्षेत्र में विचरते हुए तीर्थंकर भगवान को नमस्कार करके अपने धर्माचार्य जी महाराज को नमस्कार करता हूं। साधु प्रमुख चारो तीर्थ को खमाकर, सर्व जीव-राशि को खमाकर, पहले जो व्रत आदरे है, उनमें जो अतिचार दोष लगे हो, वे सर्व आलोच के, पडिक्कम के, निंद के, निःशल्य होकर के सव्वं पाणाइ-वायं पच्चक-खामि-सव्वं मुसा-वायं पच्चक-खामि, सव्वं अदिण्णा-दाणं पच्चक-खामि, सव्वं मेहुण पच्चक-खामि, सव्वं परिग्गहं पच्चक-खामि,सव्वं कोहं,माणं जाव मिच्छा दंसणं-सल्लं पच्चक-खामि, सव्वं अकर-णिज्ज जोगं पच्चक-खामि

जावज-जीवाए तिविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, करतंपि अन्नं न समणु-जाणामि, मणसा, वयसा, कायसा ऐसे अठारह पापस्थान पच्चक्ख कर, सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक-खामि जावज-जीवाए, ऐसे चारों आहार पच्चक्खकर, जं पियं इमं शरीरं इट्ठं, कंतं, पियं, मणुण्णं, मणामं, धिज्जं, विसासियं, समयं, अणुमयं बहुमयं भण्ड-करण्ड-समाणं, रयण-करंडग-भूयं, माणं सीयं, माणं उण्हं, माणं खुहा, माणं पिवासा, माणं वाला, माणं चोरा, माणं दंस, मसगा, माणं वाइयं पित्तियं, कप्फियं, संभीमं, सण्णि-वायइं, विविहा रोगायंका परीसहा उव-सग्गा फासा फुसंतु एवं पि य णं चरमेहिं उस्सास-णिस्सा-सेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु, ऐसे शरीर को वोसिरा कर, कालं अणव-कंख-माणे विहरामि ऐसी मेरी सद्द-हणा प्ररूपणा तो है, फरसना करूं तब शुद्ध होऊं।

ऐसे अपच्छिम मार-णंतिय संलेहणा झूसणा आराह-णाए पंच अइयारा जाणि-यव्वा न समा-यरि-यव्वा तंजहा ते आलोउं इह-लोगा-संस-पओगे, पर-लोगा-सस-पओगे, जीविया-सस-पओगे, मरणा-सस-पओगे, काम-

भोगा-सस-पओगे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

॥ तस्स धम्मस्स का पाठ १६ ॥

तस्स धम्मस्स केवलि-पण्णतस्स अब्भुट्ठि-ओमि आराह-णाए, विरओमि विराह-णाए तिविहेण पडिक-कतो वदामि जिण-चउव्वीस ।

विधि—तत्पश्चात् 'गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके 'भाव-वन्दना' की आज्ञा लेवे । आज्ञा लेकर दोनो घुटने नमाकर घुटनो पर दोनो हाथ जोडकर रखे और मस्तक नीचा नमाकर इस प्रकार बोले—

दोहा—प्रथम सात अक्षर पढू, पाच पढ़ चित लाय ।
सात-सात नव अक्षरा, जपता आनन्द थाय ।।

इसके पश्चात् एक नवकार मन्त्र बोलकर 'पाच पदो की वन्दना (पा. न १७) बोले, इसके बाद पालखी लगाकर अनन्त चौबीसी आदि दोहे (पा न १८), आयरिय उव-ज्झाए (पा न १६), अढाई द्वीप (पा न २०), चौरासी लाख जीव योनि (पा न २१), खामेमि सव्वे जीवा (पा न २२) और अठारह पाप स्थान (पा न. ७) बोले ।

इस प्रकार यहा 'चौथा आवश्यक' पूर्ण हुआ ।

॥ पांच पदों की वन्दना १७ ॥

पहिले पद—श्री अरिहंत भगवान् जघन्य बीस तीर्थं-कर जी उत्कृष्ट एक सौ साठ तथा एक सौ सित्तर देवाधि-देवजी, उनमें वर्तमान काल मे बीस विरह-मानजी महा-विदेह क्षेत्र में विचरते है । एक हजार आठ लक्षण के धरणहार, चौतीस अतिशय, पैतीस वाणी करके विराज-मान, चौसठ इन्द्रो के वन्दनीय, अठारह दोष रहित, बारह गुण सहित, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्त बल-वीर्य, अनन्त सुख, दिव्य-ध्वनि, भामण्डल, स्फटिक, सिंहासन, अशोक वृक्ष, कुसुम-वृष्टि, देव-दुन्दुभि छत्र धरावे, चवर विजावे, पुरुषाकार,पराक्रम के धरण-हार, अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र मे विचरते हैं । जघन्य दो करोड केवली उत्कृष्ट नव करोड़ केवली, केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन के धरणहार, सर्व द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के जानन-हार ।

सवैया—नमो श्री अरिहत, कर्मों का किया अन्त,
हुआ सो केवलवत, करुणा भण्डारी है ।
अतिशय चौतीस धार, पैंतीस वाणी उच्चार,
समभावे नर-नार, पर उपकारी है ।
शरीर सुन्दरा-कार, सूरज सो झलकार,
गुण है अनन्तसार, दोष परि-हारी है ।
कहत है तिलोक रिख, मन वच काया करी,
लुली-लुली वारम्वार, वन्दना हमारी है ॥

ऐसे श्री अरिहन्त भगवन्त दीन-दयाल महाराज आपकी दिवस सम्बन्धी अविनय आशातना की हो तो हे अरिहन्त

भगवन् ! मेरा अपराध वारम्वार क्षमा करिये । हाथ जोड़ मान मोड, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से १००८ वार नमस्कार करता हू ।

तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिण करेमि वंदामि, णमंसामि सक्का-रेमि सम्मा-णेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवा-सामि मत्थएण वन्दामि ।

आप मागलिक हो, उत्तम हो, हे स्वामिन् ! हे नाथ! आपका इस भव, पर भव, भव-भव मे सदाकाल शरण हो ।

दूसरे पद—श्री सिद्ध भगवान् पन्द्रह भेदे अनन्त सिद्ध हुए है । आठ कर्म खपाकर मोक्ष पहुचे हैं । तीर्थ-सिद्धा, अतीर्थ-सिद्धा, तीर्थङ्कर-सिद्धा, अतीर्थङ्कर-सिद्धा, स्वय-बुद्ध-सिद्धा, प्रत्येक-बुद्ध-सिद्धा, बुद्ध-बोधित-सिद्धा, स्त्रीलिंग-सिद्धा, पुरुष-लिङ्ग-सिद्धा, नपु सक-लिग-सिद्धा, स्वलिंग-सिद्धा, अन्य-लिग-सिद्धा, गृहस्थ-लिग-सिद्धा, एक-सिद्धा, अनेक-सिद्धा, जहा जन्म नही, जरा नही, मरण नही, भय नही रोग नहीं, शोक नही, दु ख नही, दारिद्रय नहीं, कर्म नही, काया नही, मोह नही, माया नही, चाकर नही, ठाकर नही, भूख नहीं, तृष्णा नही, ज्योत मे ज्योत विराजमान सकल कार्य सिद्ध करके, चवदे पकारे, पन्द्रह भेदे, अनन्त सिद्ध भगवान हुए हैं । अनन्त-ज्ञान, अनन्त-दर्शन अनन्त-सुख, क्षायिक-सम्य-क्त्व, अटल-अवगाहना, अमूर्त्तिक, अगुरु-लघु, अनन्त-वीर्य ये आठ गुण करके सहित है ।

सवैया—सकल करम टाल, वश कर लियो काल, मुगति मे रह्या माल, आत्मा को तारी है। देखत सकल भाव, हुआ है, जगत् राव, सदा ही क्षायिक भाव, भये अविकारी हैं। अचल अटल रूप, आवे नही भवकूप, अनूप स्वरूप ऊप, ऐसे सिद्ध धारी है। कहत है तिलोकरिख बताओ हे वासप्रभु, सदा ही उगते सूर, वन्दना हमारी है ॥२॥

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त जी महाराज आपकी दिवस सम्वन्धी अविनय आशातना की हो तो बारम्बार हे सिद्ध भगवान्! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ, जोड, मान मोड शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से १००८ वार नमस्कार करता हू। यावत् भव-भव सदाकाल शरण हो।

तीसरे पद—श्री आचार्य जी महाराज छत्तीस गुण करके विराज-मान, पाच महा-व्रत पाले, पाच आचार पाले, पाच इन्द्रिय जीते, चार कपाय टाले, नव वाड सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य पाले, पाच समिति, तीन गुप्ति शुद्ध आराधे। ये ३६ गुण और आठ सम्पदा आचार-सम्पदा, श्रुत-सम्पदा, शरीर-सम्पदा, वचन-सम्पदा, वाचना-सम्पदा, मति-सम्पदा, प्रयोग-मति-सम्पदा, सग्रह-परिज्ञा-सम्पदा सहित हैं।

सवैया—गुण है छत्तीस-पूर, धरत धरम ऊर, मारत करम क्रूर, मुमति विचारी है। शुद्ध सो आचार वन्त, सुन्दर है रूप कन्त, भण्या है सव ही सिद्धान्त, वाचणी सुप्यारी है। अधिक मधुर वेण, कोई नही लोपेकेण, सकल जीवो का सेण, कीरत अपारी है। कहत है तिलोक-रिख, हितकारी देत सीख, ऐसे आचारज ताकू, वन्दना हमारी है ॥३॥

ऐसे श्री आचार्य जी महाराज न्याय-पक्षी, भद्रिक परिणामी, परम पूज्य, कल्पनीय अचित्त वस्तु के ग्रहण-हार, सचित्त के त्यागी, वैरागी, महागुणी, गुणो के अनुरागी, सौभागी हैं। ऐसे श्री आचार्य महाराज आपकी दिवस सबधी अविनय आशातना की हो तो वारम्वार आचार्य महाराज मेरा अपराध आप क्षमा करिये। हाथ जोड, मान मोड शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से १००८ वार नमस्कार करता हू। यावत् भव-भव सदाकाल शरण हो।

चौथे पद—श्री उपाध्याय जी महाराज पच्चीस गुण करके सहित है। ग्यारह अङ्ग, वारह उपाङ्ग, चरण-सत्तरी, करण-सत्तरी, इन पच्चीस गुण करके सहित है। तथा ग्यारह अङ्ग का पाठ अर्थ सहित सम्पूर्ण जाने, चौदह पूर्व के पाठक और निम्नोक्त वत्तीस सूत्रो के जानकार हैं। ग्यारह अग—आचाराग, सूय-गडाग, ठाणाग, सम-वायाग, भगवती, ज्ञाता-धर्म-कथा, उवासग-दसा, अन्त-गड-दसा, अणुत्तरो-ववाई, प्रश्न-व्याकरण, विपाक-सूत्र।

वारह—उपांग—उववाई, रायप्प-सेणी, जीवा-भिगम, पन्नवणा- जम्बू-दीव-पन्नति, चद-पन्नति, सूर-पन्नति, निरया-वलिया, कप्प-वडसिया, पुप्फिया-पुप्फ-चूलिया, वण्हि-दसा।

चार मूल सूत्र—उत्तरा-ध्ययन, दशवै-कालिक, नन्दी-सूत्र, अनुयोग-द्वार।

चार छेद सूत्र—दशा-श्रुत-स्कन्ध, वृहत्-कल्प, व्यवहार-सूत्र, निशीथ-सूत्र और वत्तीसवा आवश्यक-सूत्र तथा अनेक ग्रन्थ के जानकार, सात नय, निश्चय-व्यवहार, चार प्रमाण आदि स्वमत तथा अन्य मत के जानकार, मनुष्य या देवता

कोई भी विवाद मे जिनको छलने मे समर्थ नही, जिन नही पण जिन सरीखे, केवली नही पण केवली सरीखे है ।

सवैया—पढत इग्यारे अग, करमो सूं करे जग, पाखडी को मान भग, करण हुशियारी है । चवदे पूरव धार, जानत आगम सार, भवियन से सुखकार, भ्रमता निवारी है । पढावे भविक-जन, स्थिर कर देत मन, तप कर तावे तन, ममता निवारी है । कहत है तिलोक-रिख ज्ञान भानु पर-तिख, ऐसे उपाध्याय ताकूं, वन्दना हमारी है ।

ऐसे श्री उपाध्याय जी महाराज मिथ्यात्व-रूप अन्धकार के मेटन-हार, समकित रूप उद्योत के करन-हार, धर्म से डिगते हुए प्राणी को स्थिर करे, सारए, वारए, धारए इत्यादि अनेक गुण करके सहित है, ऐसे श्री उपाध्यायजी महाराज आपकी दिवस सम्बन्धी अविनय आशातना की हो तो बारम्बार हे—उपाध्यायजी महाराज ! मेरा अपराध क्षमा करिये, हाथ जोड, मान मोड, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से १००८ बार नमस्कार करता हू । यावत् भव-भव सदाकाल शरण हो ।

पांचवें पद—"णमो लोए सव्व साहूणं" कहिये अढाई द्वीप पन्द्रह-क्षेत्र रूप लोक मे सर्व साधुजी महाराज जघन्य दो हजार करोड, उत्कृष्ट नव हजार करोड़ जयवन्ता विचरे, पाच महाव्रत पाले, पाच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टाले, भाव-सच्चे, करण-सच्चे, जोग-सच्चे, क्षमा-वन्त, वैराग्य-वत मन-समा-धारणीया, वय-समा-धारणीया, काय-समा-धारणीया, नाण-सम्पन्ना, दसण-सम्पन्ना, चारित्त-सम्पन्ना, वेदनीय-समा-अहि-

यास-नीया, मरणान्तिय-समा-अहि-यास-नीया ऐसे सत्ताईस गुण करके सहित हैं। पाच आचार पाले, छह काया की रक्षा करें, सात कुव्यसन त्यागें, आठ मद छोड़ें, नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पाले, दस प्रकारे यति धर्म धारे, बारह भेदे तपस्या करें, सतरह भेदे सयम पाले, अठारह पाप को त्यागे, बाईस परीषह जीतें, तीस महामोहनीय कर्म निवारें, तेतीस आशातना टालें, बयालीस दोष टालकर आहार पानी लेवे, सैंतालीस दोष टाल कर भोगें, बावन अनाचार टाले, तेडिया आवे नही, नेतिया जीमे नही, सचित्त के त्यागी, अचित्त के भोगी, लोच करें, नगे पैर चले इत्यादि काय-क्लेश करें और मोह ममता रहित है।

सवैया—आदरी सयम भार, करणी करे अपार, समिति गुपति धार, विकथा निवारी है। जयणा करे छह काय, सावद्य न बोले वाय, बुझाई कषाय लाय, किरिया भण्डारी है। ज्ञान भणे आठो याम, लेवे भगवन्त नाम, धर्म को करे काम, ममता कू मारी है। कहत हैं तिलोक-रिख करमो का टाले विख, ऐसे मुनिराज ताकू, वन्दना हमारी है।

ऐसे मुनिराज जी महाराज, आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय आशातना की हो तो बारम्बार हे मुनिराज ! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ जोड, मान मोड, शीश नमा-कर तिक्खुत्तो के पाठ से १००८ बार नमस्कार करता हू। यावत् भव-भव सदाकाल शरण हो।

॥ दोहा पाठ १८ ॥

अनन्त चौबीसी जिन नमूं, सिद्ध अनन्ता क्रोड ।
केवल ज्ञानी गणधरा, वन्दू बे कर जोड ॥१॥

दोय क्रोड़ि केवल धरा, विरह-मान जिन बीस ।
सहस्र युगल क्रोडी नमूं, साधु नमूं निश दीश ॥२॥

धन साधु, धन साध्वी, धन-धन है जिन धर्म ।
ये समरया पातक झरे, टूटे आठो कर्म ॥३॥

अरिहन्त सिद्ध समरूं सदा, आचारज उपाध्याय ।
साधु सकल के चरण को, वन्दूं शीश नमाय ॥४॥

शासन-नायक सुमरिये, भगवन्त वीर जिनन्द ।
अलिय विघन दूरे हरे, आपे परमा-नन्द ॥५॥

अगूठे अमृत बसे, लब्धि तणा भण्डार ।
श्री गुरु गौतम समरिये, वाछित फल दातार ॥६॥

गुरु गोविन्द दोनो खडे, किसके लागूं पाय ।
बलिहारी गुरु देव की, गोविन्द दियो बताय ॥७॥

लोभी गुरु तारे नही, तिरे सो तारण-हार ।
जो तू तिरयो चाहे तो, निर्लोभी गुरु धार ॥८॥

पर-उपकारी साधुजी, तारण तरण जहाज ।
कर जोड़ी हू नित नमूं, धन मोटा मुनिराज ॥९॥

साधु सती नै शूरमा, ज्ञानी नै गज-दन्त ।
इतना पीछा न हटे, जो जुग जाय अनन्त ।१०॥

गुरु दीपक गुरु चादणो, गुरु विन घोर अन्धार ।
पलक न विसरु तुम भणी, गुरु मुझ प्राण आधार ।।१।।

॥ आयरिय उवज्झाए का पाठ १९ ॥

आयरिय-उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुल-गणे अ ।
जे मे केई कसाया, सव्वे तिवि-हेण खामेमि ।।१।।
सव्वस्स समण-सघस्स, भगवओ अजलि करिअ सीसे ।
सव्वं खमा-वइत्ता, खमामि सव्वस्स अह-यपि ।।२।।
सव्वस्स जीव-रासिस्स,भावओ धम्म-निहिय निय-चित्तो।
सव्व खमा-वइत्ता, खमामि सव्वस्स अह-यंपि ।।३।।
रागेण व दोसेण व,अहवा अकयण्-णुणा पडि निवे-सेणं।
जं मे किंचि वि भणिअ,तमहं तिवि-हेण खामेमि ।।४।।

॥ अढाई द्वीप का पाठ २० ॥

अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र मे श्रावक-श्राविका दान देवे, शील पाले, तपस्या करे, शुभ भावना भावे, संवर करे, सामायिक करे, पौषध करे, प्रतिक्रमण करे, तीन मनोरथ चितवे, चौदह नियम चितारे, जीवादिक नव पदार्थ जाने, श्रावक के इक्कीस गुण करके युक्त, एक व्रतधारी, जाव बारह व्रतधारी जो भगवान् की आज्ञा मे विचरे ऐसे बडों से हाथ जोड, पैरों पडकर क्षमा मागता हूँ । आप क्षमा करें, आप क्षमा करने योग्य है और छोटों से समुच्चय खमाता हूँ ।

॥ चौरासी लाख जीवयोनि का पाठ २१ ॥

सात लाख पृथ्वी-काय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेउ-काय, सात लाख वायु-काय, दस लाख प्रत्येक वनस्पति-काय, चौदह लाख साधारण वनस्पति-काय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, दो लाख चउ-रिन्द्रिय, चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख तिर्यच पचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य । ऐसे चार गति मे चौरासी लाख जीव-योनि के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त-अपर्याप्त जीवो मे से किसी भी जीव का हालते, चालते, उठते-बैठते, सोते, हनन किया हो, कराया हो, हनता प्रति अनुमोदन किया हो, छेदा हो, भेदा हो, किलामणा उपजाई हो तो मन, वचन, काया करके✲ अठारह लाख चौबीस हजार एक सौ बीस (१८,२४,१२०) प्रकारे जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

[टिप्पण—✲जीव तत्त्व के ५६३ भेदो को अभिहया, वत्तिया आदि दस के साथ गुणा करने से ५६३० भेद होते हैं । फिर इनको राग और द्वेष के साथ दुगुणा करने से ११२६० भेद बनते है । फिर इन्ही का मन, वचन, काया के साथ त्रिगुणा करने से ३३७८० भेद हो जाते है । फिर इनको ही तीन करणो के साथ गुणा करने से १०१३४० भेद बन जाते हैं । इनको भी तीन काल के साथ गुणा करने से ३०४०२० भेद हो जाते है । फिर इनको अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु और आत्मा इन छह से गुणा करने पर १८, २४, १२० भेद बनते हैं अर्थात् इस

प्रकार से मैं मिच्छामि दुक्कड देता हू और पाप कर्म न करने की प्रतिज्ञा करता हू ।]

॥ खामेमि सव्वे जीवा का पाठ २२ ॥

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूएसु, वेरं मज्झं न केणई ॥
एवं-महं आलो-इय, निंदिय गरहिय दुगछियं सम्मं ॥
तिविहेण पडिक-कंतो, वंदामि जिण-चउव्वीसं ॥

विधि—तत्पश्चात् 'गुरुदेव' को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके 'पाचवे-आवश्यक' की आज्ञा लेवें ।

पाचवें 'काउस्सग्ग आवश्यक' मे खडे-खडे 'प्रायश्चित्त का पाठ (पाठ न २३), नवकार मन्त्र, करेमि भन्ते, इच्छामि ठामि (पा नं २) और तस्स उत्तरी का पाठ कहकर 'काउस्सग्ग' करें । काउस्सग्ग मे चार लोगस्स का ध्यान करें । (देवसिय, रायसिय प्रतिक्रमण मे चार लोगस्स, पक्खी प्रतिक्रमण मे आठ लोगस्स, चौमासी प्रतिक्रमण मे बारह लोगस्स और सवत्सरी प्रतिक्रमण मे बीस लोगस्स का ध्यान करें ।)

ध्यान पूर्ण होने पर 'णमो अरिहन्ताण' ऐसा प्रगट कहकर ध्यान खोले । बाद मे नवकार मन्त्र, काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ (पा न ८) और एक लोगस्स का पाठ प्रगट बोल कर दो बार 'इच्छामि खमासमणो' (पा न ६) विधि पूर्वक बोले । इस प्रकार पाचवा आवश्यक समाप्त हुआ ।

॥ प्रायश्चित्त का पाठ २३ ॥

इच्छामि णं भंते । तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे-देवसियं पायश्चित्तं विसोहणत्थं करेमि काउस्सग्ग ।

विधि—तत्पश्चात् गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करके 'छठे आवश्यक' की आज्ञा लेवे । आज्ञा लेकर ''छठे पच्चक्खाण आवश्यक मे खडे होकर✻साधु महाराज से शक्ति अनुसार 'पच्चक्खाण' करे । यदि साधु महाराज नही विराजते हो तो, बड़े श्रावक जी से 'पच्चक्खाण' करे। यदि वे उपस्थित नही हो तो स्वय 'समुच्चय पच्चक्खाण' (पा. न '२४) से पच्चक्खाण करे ।

इसके बाद—'अन्तिम पाठ (पा. न. २५) बोलकर नीचे बैठे और बाया घुटना खडा करके पूर्वोक्त विधि से दो बार णमोत्थुण का पाठ बोले ।

तत्पश्चात् गुरुदेव को तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करे। यदि वहा गुरु महाराज नही हो तो पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह करके श्री महावीर स्वामी तथा अपने धर्माचार्य जी महाराज को 'तिक्खुत्तो' के पाठ से वन्दना करे और बाद मे स्वधर्मी भाइयो से खमत-खामणा कर लेवे । बाद मे चौबीसी पा न २६) आदि स्तवन बोले ।

(✻टिप्पन- श्राविकाएं साध्वी जी महाराज से, वे न हो तो बडी श्राविका से और वह भी न हो तो स्वय 'पच्चक्खाण' करें 'समुच्चय-पच्चच्खाण' (पा न २४) से।

॥ समुच्चय पच्चक्खाण का पाठ २४ ॥

गंठि-सहियं, मुट्ठि-सहियं, नमुक्कार-सहियं, पोरिसियं, साड्ढ-पोरसियं (अपनी-अपनी इच्छा अनुसार) तिवि-हंपि, चउवि-हंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं (अपनी-२ धारणा प्रमाणे, पच्चक्खाण) अण्णत्थणा भोगेणं सहसा-गारेणं महत्तरा-गारेणं सव्व समाहि-वत्ति-या-गारेणं ✲ वोसिरामि ।

(टिप्पन—✲ स्वयं पच्चक्खाण करना हो तब 'वोसिरामि' ऐसा बोले और दूसरे को पच्चक्खाण कराना हो तब 'वोसिरे' ऐसा बोले ।)

॥ अन्तिम पाठ २५ ॥

सामायिक १, चौवीस थव २, वन्दना ३, प्रतिक्रमण ४, कायोत्सर्ग ५ और पच्चक्खाण ६ । इन छः आवश्यकों मे जानते-अजानते जो कोई अतिचार दोष लगा हो दिवस सम्बन्धी तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण, अव्रत का प्रतिक्रमण प्रमाद का प्रतिक्रमण, कषाय का प्रतिक्रमण, अशुभ योग का प्रतिक्रमण, इन पाच प्रतिक्रमण मे से कोई प्रतिक्रमण न किया हो तथा चलते-फिरते, उठते-बैठते-पढते,

गुणते, जानते-अजानते, ज्ञान-दर्शन, चारित्र, तप सम्बन्धी कोई दोष लगा हो तो देवसि सम्बन्धी तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

गये काल का प्रतिक्रमण, वर्तमान काल की* सामायिक और आगामी काल का पच्चक्खाण इनमें जो कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

प्रतिक्रमण का पाठ उच्चारण करते काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, न्यूनाधिक आगे पीछे कहा हो तो देवसि सम्बन्धी तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

देव अरिहन्त, गुरु निर्ग्रन्थ 'आचार्य श्री नानालाल जी म. सा धर्म केवली भाषित ।' सच्चे की श्रद्धा और झूठे को बार-२ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सम, सवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्था ये व्यवहार समकित के पाच लक्षण हैं । इनको मैं धारण करता हू ।

(टिप्पण*सामायिक, सवर या पौषध जो भी उस समय हो, वह बोलना चाहिये ।)

नोट—प्रतिक्रमण मे जहा 'देवसिय' शब्द आया है, वहा देवसिय प्रतिक्रमण मे 'देवसिय', 'राइय' प्रतिक्रमण में 'राइय', पक्खी प्रतिक्रमण मे 'पक्खी सम्बन्धी', चौमासी प्रतिक्रमण मे 'चौमासी सम्बन्धी' और 'सवत्सरी प्रतिक्रमण' मे 'सवत्सरी सम्बन्धी' कहना चाहिए ।

आलोचना का पाठ

॥ दोहा ॥

आदीश्वर आदे नमू, नमू शान्ति जिनराय ॥
नमू नेम फणधार ने, वर्द्धमान सुखदाय ॥१॥
आदि रकार अंते म-कार, तिण मे जिन जो होय ॥
पाचो अग नमाय के, नमू नमू नित्य सोय ॥२॥
ॐ ह्री श्री नमू, नमू साधु गणधार ॥
धर्मिआउसाय नमू, दर्शन ज्ञान सुखकार ॥३॥
ॐ सोऽहं आतमा, ह्री पच पद जान ॥
श्री सम्यक् ज्ञान है, एसो तत्त्व पहिचान ॥४॥
त्रिवर्ण ओंकार है व्याकरण सिद्ध करेह ॥
आकार उ-कारम-कार की, मात्रा अर्ध धरेह ॥५॥
मात्रा ऊपर बिन्दु है, ताको नमन करेह ॥
नागम निर्मल आतमा, एसो भाव धरेह ॥६॥
श्रावक ने वलि श्राविका, श्रमणी ने अणगार ॥
चौमासी पक्खी सवत्सरी, करे आलोयणा सार ॥७॥

ढाल

'अठारह पापों की आलोयणा'

प्राणी मे पाप किया घणा, नही कियो धर्म लगारो ॥
इण भव मे जिना कारी, परभव नाही विचारो रे ॥प्रा॥१॥

रचना—श्री कृष्ण मुनि महाराज के शिष्य
मुनिश्री पेमराज जी ।

हिंसा कीनी जीव को, बोल्या झूठ अपारो रे ॥
चोरी अन्यारी थे करी, परिग्रह सावद्य व्यापारो रे ॥प्रा०॥२॥
क्रोध करी गाली दीवी, मूंछ्या ताव अभिमानो रे ॥
कपट करी ठगिया घणा, लोभ को नही परिमाणो रे ॥प्रा०॥३॥
स्नेह करी नाता जोडिया, हास्य करी नाता तोड्या रे ॥
आपण पुत्र ने पालिया, पर पूत कड़का मोड्या रे ॥प्रा०॥४॥
क्लेश कदाग्रह थे किया, कूडा आल जो दीधा रे ॥
चाडी चुगली थे करी, कीधी परकी निन्दा रे ॥प्रा०॥५॥
स्वरिद्धि देख राजी हुवो, पर की देख बेराजी रे ॥
मर्मकारी भाषा बोलने, खेल्यो कपट की बाजी रे ॥प्रा०॥६॥
कुगुरु कुदेव सेविया, हिंसा मे धर्म बताया रे ॥
मिथ्या पर्व आराधिया, बड पीपल पूजाया रे ॥प्रा०॥७॥

ऐसे १८ पापस्थान के विषय देवसी, पक्खी चौमासी और सवत्सरी सम्बन्धी जो कोई पाप दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ॥

पच्चीस-मिथ्यात्व ।

कुदेव-गुरु-धर्म सेवतो, नही छोडे अभिग्रही टेको रे ॥
सब देव-गुरु-धर्म-सारीखा, अनभिग्रही न विवेको रे॥प्रा०॥८॥
अभिनिवेशी मिथ्यात्वी हुवो, अर्थ परूप्या विरुद्धो रे ॥
सशय-शका-पुण्य-पाप को अनाभोगी अशुद्धो रे ॥प्रा०॥९॥
लौकिक, लोकोत्तर कुप्रवचन, कुमार्ग से कीनी प्रीतो रे ॥
ओछा अधिक परूपिया, जिन वचन विपरीतो रे ॥प्रा०॥१०॥
छकाया जीव अजीव कह्या, पुद्‌गल जीव बताया रे ॥
दया-शील अधर्म कह्यया, हिंसा मे धर्म कहाया रे ॥प्रा०॥११॥

रत्नत्रय साधन करे, तिनकूं असाधु बताया रे ॥
छकाया गटको करे, साधुजी कही पूजाया रे ॥प्रा०॥१२॥
ब्याह सगाई संसार का, कारज, मुक्ति बताया रे ॥
दान-शील-तप भावना, संसारी कार्य समझाया रे ॥प्रा०॥१३॥
सिद्धानें सकर्मी कह्या, कर्मी अकर्मी ठहराया रे ॥
अविनय, अक्रिय, अज्ञानता, असातना मिथ्यात्व दर्शाया रे ।प्रा०१४।
जीव रूले संसार मे, ऐस्या पच्चीस मिथ्यातो रे ।
मोटा जाणी मैं तो परिहरू, नहीं सेऊ कोई भातो रे॥प्रा०॥१५॥

ऐसी पच्चीस प्रकार की मिथ्यात्व मे से कोई भी मिथ्यात्व सेवन की हो, कराई हो, अनुमोदी हो, तो दवसी, पक्खी, चौमासी, संवत्सरी, सम्बन्धी तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

प्रथम व्रत ।

धनदारे सिर जूटा दिया, अंकुश टोच चलाया रे ॥
अन्न पाणी रोकी दिया, गाढा बन्धन बधाया रे ॥प्रा०॥१६॥
सूवा सारस मोरने, पिंजरा माहे घात्या रे ॥
तीतर रोज ने हिरणला, घणा जीवा ने पात्या रे ॥प्रा०॥१७॥
ढान्दारे मुख छीकी दीनी बाछड दूध रुकाया रे ॥
वियोग सोग पड़ाविया, ऊभा [illegible] मूकाया रे ॥प्रा०॥१८॥
ऊंट बलद घोड़ा पाड़ा, अधिक भार लदाया रे ॥
ताप ठण्ड मे गलाविया, सींग पूंछ कटाया रे ॥प्रा०॥१९॥
'[illegible] नाव' सिकार मे, 'वध' [illegible] माल ल्याया रे ॥
सर्वे कया जीव-घात ने, भव अनेक बधाया रे ॥प्रा०॥२०॥

द्वितीय–व्रत

शंका करी कलंक दिया, अणहोता क्लेश जगाया रे ।।
रेस मरम तू बोलियो, अछत्ता दोष लगाया रे ।।प्रा०।।२२।।
कन्या-गो-भूमि कारणे, आल पपाल तू बोल्यो रे ।।
पारकी थापण दबाय ने, उलटी चाल तू चालयो रे।।प्रा०।।२३।।
जाली कागज खोटा लिख्या, साख खोटी मे अगवानी रे ।।
पाणी पियो थे छाण ने, पियो लोही अणछाणी रे ।।प्रा०।।२४।।
"सत्यघोस" थापण दाबने, झूठी महिमा फैलाई रे ।।
अते हुओ पछतावणो, गयो दुर्गति माही रे ।।प्रा०।।२५।।
असत्य भाषा नही बोलिये, प्रतीति उठ जावे रे ।।
वसु राजा मिश्र बोलने, भव अनन्त बधाया रे ।।प्रा०।।२६।।

ऐसे द्वितीय व्रत मे देवसी, पक्खी चौमासी और सवत्सरी सबधी जो कोई पाप अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।।

तृतीय–व्रत

चोरी की वस्तु लिवी, चोरो ने सहाज्य दीधो रे ।।
राज-विरुद्ध तोला मापा, वस्तु भेल सभेल कीधो रे।।प्रा०।।२७।।
आज्ञा विना वस्तु पारकी, लेइ हुवो घणो राजी रे ।।
मित्र बनी धन छीनियो, पर घात बछी पाजी रे।।प्रा०।।२८।।
आपणे अथवा कुटुम्ब के सज्जन प्रेमी काजे रे ।।
करे करावे चोरी कर्म देव गुरु से न लाजे रे ।।प्रा०।।२६।।
मार पडी मोदी सिरे, घेवर घर वाला खाया रे ।।
पर भव की ज्ञानी कहे, इण भव मे दु ख पाया रे ।।प्रा०।।३०।।

ऐसे तीसरे व्रत-मे देवमी, पक्खी, चौमामी और सवत्सरी सबधी जो कोई पाप दोप अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।।

चतुर्थ-व्रत

घर छोडी परस्त्री रम्यो, लोका मे अपयश लियो रे ॥
धन गमायो गाठ को, फिट्ट फिट्ट नहू कियो रे ॥प्रा०॥३१॥
काम अन्ध बु होय ने, नही गिण्यो पुण्य पापो रे ॥
नर्व जाति री आग्जा, माता भगिनी को खोयो आपो रे॥प्रा॥३२॥
हस्त थोडा काल की, ऊमर छोटी नारी रे ॥
तिण मे ही क्रीडा करी, लागो तुभ अतिचारो रे ॥प्रा०॥३३॥
विधवा विसवगु नारी मे, दाम दे प्रीति लगाई रे ॥
के दूजा ने मेलिया, ब्याह सगाई कराई रे ॥प्रा०॥३४॥
विषय अभिलाषा करी, अनेक पाप कमाया रे ॥
काम विकार वधाविया, मनुष्य भव गमाया रे ॥प्रा०॥३५॥
रावण पद्मोत्तर मणिरथ, परस्त्री का रसिया रे ॥
राज धन लाज सब तजी, दुर्गति मे जाई वसिया रे॥प्रा०॥३६॥

नहीं सुकृत-कियो हाथ से, मूंजी मे नाम लिखायो रे ॥
बेटी ज्यू पाल पोसने, धन दूजा ने भोलायो रे ॥प्रा०॥४१॥
धन म्हारो हू धन को धणी, धन में धर्म गवायो रे ॥
आठमो धक्री नर्क सातमी,तृष्णा फल यह पायो रे॥प्रा०॥४२॥

ऐसे पाचवें व्रत मे देवसी, पक्खी, चौमासी और सवत्सरी सम्वन्धी जो कोई पाप दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

षष्ठ–व्रत

देश देशावर मे भ्रमे, जिसकी मर्यादा न काई रे ॥
अव्रत-नाला नही रोकिया, सबकी क्रिया आई रे ॥प्रा०॥४३॥
लोभवश मर्यादा लोपने, विदेशी वस्तु मगाई रे ॥
धर्म ने धन दोनो गया, कैसी करी है कमाई रे ॥प्रा०॥४४॥
स्वामी हुक्म या व्यापार के कारण से तू भमियो रे ॥
अथवा सेलानी जीवडो, धन जोवन को छकियो रे॥प्रा०॥४५॥

ऐसे छट्ठे व्रत के विषय देवसी, पक्खी, चौमासी सवत्सरी सबधी जो कोई पाप दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

सप्तम–व्रत

वस्तु भोग–उपभोग की, नही मर्यादा धारे रे ॥
भक्ष अभक्षण जाणे नही, यो मानव भव हारे रे ॥प्रा०॥४६॥
उल्लण-दतण फल अब्भिगण. उवट्टण मजण वत्थो रे ॥
विलेपण-धूप पुप्फ पेज विही,भूषण वाहणकत्थो रे ॥प्रा०॥४७॥
भक्खण ओदण सूप विगय-विही, साग महुर वखाणो रे ॥
जीमण पाणी मुखवासना,पण्ही सयण तुम जाणो रे॥प्रा०॥४८॥
सचित्त–द्रव्य छब्बीस की, मर्यादा करो भाई रे ॥
आगम के अनुसार से, देसूं अर्थ सुणाई रे ॥प्रा०॥४९॥

त्रस स्थावर हिंसा घणी, दया को नही रहे असो रे ॥
लाज मर्यादा खोय ने, लजाया मात तात वशो रे॥प्रा०॥७६॥
तेल लुणी ने घृत का, व्यापार से घणो राजी रे ॥
कर्म उदय जव आवसी, कांई करसी पाजी रे ॥प्रा०॥७७॥
भागा पीकर छक रह्यो, कांई नही रही शुद्धो रे ॥
कपडा गमावे गाठ का, होय रयो वेशुद्धो रे ॥प्रा०॥७८॥
गाजा तमाकू पीवतो, आकोती खाई छकियो रे ॥
माता भगिनी भारिया, देखी ज्यो त्यो बकियो रे ॥प्रा०॥७९॥
ऊवर अजीर ने पीपली, तीनो फला मे जीव रासो रे ॥
ते त्यागन कीधा विना, माठी गत होसी वासो रे ॥प्रा०॥८०॥
गडा काचो गर्भ है, आचारज इम भाखे रे ॥
वडी पीली मे जीव है, आगम की है साखो रे ॥प्रा०॥८१॥
आचार केई भात का, खावण ने घणो रसियो रे ॥
नीलण-फूलण देखे नही, रसनेन्द्रिय मे फसियो रे॥प्रा०॥८२॥
जिण मे फूलक शका नही, नही त्रस जीव की घातो रे ॥
तिक मे जीव वतावण, मानो मिथ्या बातो रे ॥प्रा०॥८३॥
अनुत्तरोववाई सूत्र मे, ठण्डा आहार मुनि लेवे रे ॥
रस चलित फूलण सहित, कदापि नही सेवे रे ॥प्रा०॥८४॥
"दशवैकालिक" ठाणाग मे, त्रस जीव आठ ठेकाणो रे ॥
'आवश्यक वृत्ति सातमे' बावीस अभक्ष वखाणो रे॥प्रा०॥८५॥

ऐसे सातवें व्रत के विषय देवसी, पक्खी, चौमासी और सवत्सरी सम्बन्धी जो कोई पाप दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

पन्द्रह कर्मादान

अग्नि आरम्भ थें किया, चूना का आव कराया रे ॥
वन मे झाडी लेयने, घणा वृक्ष कटाया रे ॥प्रा०॥८६॥

कोयला कर्म ते किया, सोनो ने रूप तपाई रे ॥
शीत निवारण कारणे सिगडिया सिलगाई रे ॥प्रा०॥८७॥
गाडा गाडी रथ पालखी, किया थे व्यापारो रे ॥
ऊट बलद भाडे दिया, नही श्रावक आचारो रे ॥प्रा०॥८८॥
डूंगर पत्थर फुडाविया, देवल देव घराया रे ॥
हीरा पन्ना कढाविया, मन्दिर महल पडाया रे ॥प्रा०॥८९॥
नवीन नारी नर सेज मे, अस्फालन कर्म कमाया रे ॥
धरती मे दारु बिछायने रोज उडाइ दिया रे ॥प्र०॥९०॥
दात चिराया सीग काटिया, चमरी गाय पूंछ लीधा रे ॥
लाख तोडाई वृक्ष की, व्यापार रस का कीधा रे ॥प्रा०॥९१॥
सोमल सख थें वणजिया, ते खाया प्राण जावे रे ॥
यन्त्र केई चलाविया, घणा जीव कष्ट पावे रे ॥प्रा०॥९२॥
व्यापार गुलीका थे किया, रगणा पाखा कराया रे ॥
बेल घोड़ा कूटाविया, निलछण कर्म किया रे ॥प्रा०॥९३॥
दव दिया बन मे घणा, हरिया वृक्ष जलाया रे ॥
धन खाया लोका तणा, हिरदे दव लगाया रे ॥प्रा०॥९४॥
पाल तलाव फोडाविया, मच्छ कच्छ मर जावे रे ॥
लोभी नर समझे नही, साली गेहू बवावे रे ॥प्रा०॥९५॥
कुत्ता बिल्ली पालने, जीवा की घात करावे रे ॥
अव्रत तू पोषे यो ही, बात न व्रत की सुहावे रे ॥प्रा०॥९६॥

ऐसे पन्द्रह कर्मादान के विषय देवसी, पक्खी, चौमासी संवत्सरी सबधी जो कोई पाप दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

अष्टम-व्रत

कोक शास्त्र तू ही पढे, काम—कथा तू करतो रे ॥
कदर्प जागे जिण बात सूं, निशर्मो होय फिरतो रे॥प्रा०॥९७॥

तीव्राभिलाषा भोग भोगव्या, आयुध हाथ बधाया रे ।।
रेकारा तू कारा देवतो, अनर्थादण्ड कमाया रे ।।प्रा०।।६८।।
चवदे ठिकाणेरा जीवीकी, ओलखाण नहीं पाई रे ।।
ताणा तूण करी घणी हिरदे समता न आई रे ।।प्रा०।।६६।।
सर्मूछिम मनुष्य ऊपजे चवदे ठिकाणे आरे ।।
मत्र मूत्र श्लेष्म मे, याकी समझ करो भाई रे ।।प्रा०।।१००।।
कफ पित्त वमन माय ने, लोही राध के माही रे ।।
सूखा-पुदगल चामडे (गीले), सद्गुरु यो समझाई रे ।प्रा०।१०१।
स्त्री-पुरुष सयोग मे, सर्मूछिम असखो रे ।।
सञ्ञी पचेन्द्रिय नव लख उपजे, छोडो यह प्रसगो रे ।प्रा०।१०२।
मर्या माणस शरीर मे, घडी पुणा दो माही रे ।।
सर्मूछिम उपजे सही, यो कहे आगम माही रे ।।प्रा०।।१०३।।
नगर नाला माय ने, और अशुची ठिकाणे रे ।।
खर-खटादिक मे ऊपजे, जिन वचन इम जाणो रे ।प्रा०।१०४।।
धोवण पाणी के माहे, कोई समूर्छिम केवे रे ।।
झूठा बोला प्राणिया, मिथ्यातम ने सेवे रे ।।प्रा०।।१०५।।
थूकने अमृत बताबियो वैदक ग्रन्थ के माही रे ।।
तिण मे जीव बतावता, अकल कठिने गमाई रे ।।प्रा०।।१०६।।
जूना घर उखेल ने, नमि नीम दिराया रे ।।
शीशा डाल वधाविया, ऊचा महल झुकाया रे ।।प्रा०।।१०७।।
गारा गोवर थे किया, चूना आव पकाया रे ।।
कोरणी जाल झरोखा किया, घणा जीवाने पचाया रे।प्रा०।१०८।
बाग बगीचा लगाइया, वृक्षा के मद्य चढाया रे ।।
फूल फल छेदन किया, वापी कूआ खुदाया रे।।प्रा०।।१०६।।
वायु को आरम्भ थें कियो, पखा पवन ढुलाया रे ।।
झटका-फटका थें किया, चामर थे विजाया रे।।प्रा०।।११०।।

वृक्ष कटाया मोट का, केई काष्ठ पडाया रे ।।
छेदन-भेदन थे किया, फल-फूल तोडाया रे ।।प्रा०।।१११।।
जन्तू जीवा ने मारिया, लटगिंघोला वाल्या रे ।।
जूवां ने लिखा मारी घणी, श्रावक व्रत नही पाल्या रे।प्रा०११२।
दूध-दही घृत तेल का, ठाम उघाड़ा राख्या रे ।।
झींगर कसारी ऊदरा, केई के प्राण विनास्या रे ।।प्रा०।।११३।।
सूलिया धान भिजोविया, अथवा तावडे नाख्या रे ।।
विकलेन्द्रिय मार्या घणा,काई करू जाकी व्याख्या रे।प्रा ।११४।
अण देख्या धान ओरिया, अण छाणया आदण दीधा रे।।
बिंधी लकडी जलावतां,अधर्मी कर्म जो कीधा रे ।।प्रा०।।११५।।

ऐसे आठवें व्रत मे देवसी. पक्खी, चौमासी, संवत्सरी सबधी जो कोई दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड।

नवमा-दशमा-ग्यारहवां-बारहवां--व्रत

शुद्ध सामायिक ना करी, अठी वठी ने झाक्यो रे ।।
द्रव्य क्षेत्र और काल को,जरा उपयोग न राख्योरे।।प्रा०।।११६।।
द्रव्य क्रिया कीधी घणी, तजिया नही निज रोषो रे ।।
ऊघाडे मुख बोलतो, और लगातो कई दोषो रे ।।प्रा०।।११७।।
संवर व्रत नही किया, नही देशावगासी रे ।।
औरा ने करता देखने, घणी करतो हासी रे ।।प्रा०।।११८।।
साधु सतियो ने देखने, द्वेषी होय के बकियो रे ।।
अथवा कीनी मश्करी, अभिमान मे छकियो रे ।।प्रा०।।११९।।
इम हीज दशमा ग्यारमा, पौषध की विधि जाणो रे ।।
जाण पणा बिना यो ही खोयो,मानवभव को ठाणो रे।प्रा.।१२०।
सामायिक पोषा मायने, नेणा नेण जो साध्या रे ।।
नाम लेइ वखाण को, चिकणा कर्म जोंबाध्या रे ।।प्रा०।१२१।।

निज हाथे दान देइने, साधु सुपात्र न पोष्या रे ॥
टग–मग सामो जोवतो, भक्ति सुन सतोष्मा रे॥प्रा०॥१२२॥
भरीया घर मे जनमियो, श्रमणोपासक कहायो रे ॥
खाली हाथे जावसी, यो अवसर जो गमायो रे॥प्रा०॥१२३॥
दान देता देखी और ने, मन मलिनता धारी रे ॥
परभव मे इण पाप से, हो दरिद्री अवतारी रे ॥प्रा०॥१२४॥

चार शिक्षाव्रत मे देवसी, पक्खी, चौमासी सवत्सरी मवधी जो कोई दोष पाप अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

पच्चीस क्रिया

क्रिया पच्चीस लगावतो भेद कहू न्याया न्यारा रे ॥
सद्गुरु के प्रसाद से आगम के अनुसारा रे ॥प्रा०॥१२५॥
काया क्रिया लागे अग मे, अधिकरण मे खड्ग दडो रे ॥
तापना ऊपर सर्व तपे, पाऊसिया क्रोध प्रचडो रे॥प्रा०॥१२६॥
पाचमी जीव घात की, छट्ठी छकाय आरम्भो रे ॥
परिग्रह धन भेलो करे, आठमी कपट प्रसगो रे ॥प्रा०॥१२७॥
मिथ्यात्व उलटो सरदहे, दशमी नही पचखाणो रे ॥
दिट्ठी मे स्त्री पुरुष देखले,पुठ्ठी आश्रव सुजानो रे॥प्रा०॥१२८॥
पाडुचिया खोटो चिन्तवे, चवदमी सामन्त कहावे रे ॥
सहत्थिया शस्त्र थको लाठी,लोडी से कर्म उपावे रे।प्रा०।१२९।
अणवणिया गाली देवे, विदारे फल ने पानो रे ॥
अण अयोगी क्रिया लागती,इस लोक विरुद्ध जाणो रे।प्रा।१३०।
मन वचन काया जोग से, लागे कर्म यो जाणी रे ॥
नाटक जाता चोर मारता, कर्म वधे समुदाणी रे ।प्रा०।१३१।
पेज क्रिया लागे स्नेह थी, वैरी देख उपजे द्वेषो रे ॥
इरियावही केवली सगे, कारण कर्म पचीसो रे ॥प्रा०॥१३२॥

ऐसें पच्चीस क्रियाओ के योग से, जो पाप दोष संचित हुए होवे तो त्रिविध-२ कर अनन्त केवली गुरुदेव और आत्मा की साक्षी से वोसिरे ! वोसिरे !! वोसिरे !!

स्त्री-कृत्य आलोयणा

कुलटा नारी होय ने, पर पुरुष सेवन कीधा रे ॥
नारी-पुरुष संयोग मेलव्या, गर्भ गालो दीधा रे ॥प्रा०॥१३३॥
नीबू केरी चीरने, भरीया माही मसाला रे ॥
गड-गूंबड हुआ थका, ऊपर बाध्या पाला रे ॥प्रा०॥१३४॥
गाली-गीत गाया घणा, नाटक बहुत नचाया रे ॥
नित्य शृंगार बणावती, ताजा माल कर खाया रे ।प्रा।१३५।
पीठो उबटण किया, जुल्फा पडिया सवारया ॥
अरीसा में देखने, मुंडापे हाथ फेराया रे ॥प्रा०॥१३६॥
ऐनक तिलक नथ चादला, कर प्रीतम ने रिझाया रे ॥
हास्य विनोद विलास से, विषय फास रचाया रे॥प्रा०॥१३७॥
सासू-श्वसूर देवर जेठ ने, सुख रत्ती नही दीधा रे ।
भाई भोजाई माय ने, जुदा-जुदा घर कीधा रे ॥प्रा०॥१३८॥
घर में बडेरी होय ने, ब्याह सगाई करिया रे ॥
बेटा-बेटी परणाय ने, उपदेश सोवण का दिया रे ।प्रा०।१३९।
बीद-बीदणी माय ने, देखिया नजर विकारो रे ॥
व्रत भग होवे सही, उडी दृष्टि विचारो रे ॥प्रा०॥१४०॥
केईक डूबी देखने, केईक मनसा पापो रे ॥
केई काया से डूबीया, ऐसा समझो आपो रे ॥प्रा०॥१४१॥
किसवणा का भव मे किया, भोगी पुरुष रिझाया रे ॥
काम कुचेष्टा करी घणी,दाम दे गूंज दिखाया रे॥प्रा०॥१४२॥

क्षण-क्षण मे क्रोध कियो, धन देखी कियो अभिमानो रे ।।
कपट कियो भरतार से, गेणा को लोभ अरमानो रे।प्रा०।१४३।
आप शोभा परनिंदा करी, करिया पाप अठारो रे ।।
घर धन्धो कियो घणो,किस होसी भव पारो रे ।।प्रा०।।१४४।।
समझणी वाई वाजती, सोले श्रृंगार वनाया रे ।।
झीणी चाल ज्यो चालती, पर पुरुषा ने रिझाया रे।प्रा०।१४५।
डोरा डण्डा करे घणा, टामण टूमण करती रे ।।
निज घर पैर टिके नही,पर घर नित की फिरती रे।प्रा०।१४६।
साधु-साध्वी माय ने, घणो वधायो द्वेषो रे ।।
मन मे तू राजी हुई, आगे काई देशी लेखो रे ।।प्रा०।।१४७।।
व्यापार करे वाजार मे, ऊघाडो राखे माथो रे ।।
घर कारज छोडी करी, घणी करे या बातो रे ।।प्र०।।।१४८।।
रास्ता माहे वैठी रहे, लाज नही नही नातो रे ।।
पुरुपा मे वैठी रहे, जावे आधी रातो रे ।।प्रा०।।१४९।।
सतिया का नही काम ये, हृदय समझो वायाए ।।
कोई पुरुप जो देखसी, देसी कलक लगाया रे ।।प्रा०।।१५०।।
इतनी सिखामण मानसी, तव सुधरेला काजो रे ।।
साधु गरजी कहेण का,मान्या सू सुख होसी साजो रे।प्रा।१५१।

पुरुष-कृत्य

धोबी-तेली तम्बोली थयो, शूद्र वणीक ने राजो रे ।।
ब्राह्मण होय यज्ञ किया, धीवर पारधी अखाजो रे ।प्रा०।१५२।
रगारा भव मायने, अनेक भट्टिया चढाई रे ।।
गाचो मोचो खटिक भवे, लुटाया प्राण हर्षाई रे ।।प्रा०।।१५३।।
श्रावक नाम धरायने, व्रत वारा नही लीना रे ।।
नेम चवदा न चितारिया,रात्रि भोजन कीना रे ।।प्रा०।।१५४।।

प्रश्न कपट से पूछने, ठट्ठा मश्करी करतो रे ॥
भोला साधु ने देखने, मुखे पल्लो दई हसतो रे ॥प्रा०॥१५५॥
छल-छिद्र देखे घणा, घणो कपट की फासी रे ॥
अणहोती वार्ता स्थापने, सीधो दुर्गति जासी रे ॥प्र०॥१५६॥
निंदा कीधी साधु की, अठी वठी ने लगाया रे ॥
निज-तत्त्व जाण्यो नही, साधा ने खूब लडाया रे॥प्रा०॥१५७॥
साधु अज्ञानी जो होवे, श्रावक मे मिल जावे रे ॥
श्रावक पक्ष बधे घणो, दोनो की निंदा होवे रे ॥प्रा०॥१५८॥

ऐसे अज्ञान वश, श्रावक-श्राविका के पद मे स्त्री-पुरुष मिश्रित दुष्कृत्य मन, वचन, काया से, सेवन किये हो अथवा देवसी, पक्खी, चौमासी और सवत्सरी सवधी जो पाप दोष अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कड ।

साधु की आलोयणा

साधु नाम धरायने, हिंसा मे धर्म बताया रे ॥
माया कपट किया घणा, धूर्त पणे पूजाया रे ॥प्रा०॥१५९॥
पर की प्रशसा देखने, धर्म मे द्वेष कराया रे ॥
छत्ता अछत्ता औगुण बोलिया, निंदा बहुत कराया रे ।प्रा ।१६०।
यन्त्र-मन्त्र-तन्त्र किया, काल दुकाल बताया रे ॥
गृहस्थ की चिंता करी, साधु धर्म गमाया रे रे॥प्रा०॥१६१॥
ममत्व तजी नही कुटुम्ब की, घणो परिचय राखे रे ।
मोह कर्म मे लिपटिया, वे शिव सुख किम चाखे रे ।प्रा०।१६२।
अणजाणी वस्तु लिवी, मेटी सूत्र को आणा रे ॥
राजा गुरु और गृहस्थ का, अदत्त दोष लगाया रे ।प्रा०।१६३।
चौथा व्रत के मायने, बाई अकेली से बातो रे ॥
मन-वचन से डिग गयो, पकड तेहनी हाथो रे ॥प्रा०॥१६४॥

दान देता मना किया, शीलव्रत भगाया रे ॥
तपस्या कदी करी नही,भाव अशुद्ध हिये लाया रे॥प्रा०॥१७८॥
इतनी वाता छोडसो, तव सुधरसी काजो रे ॥
शुद्ध करणी प्ररूपणा, करो मुक्ति को साजों रे ॥प्रा०॥१७९॥
और जजाल छोडी करो, भावना वारे भावो रे ॥
उज्ज्वल मन तुम राखज्यो,अमरापुर मे जावो रे॥प्रा०॥१८०॥

इत्यादिक मुनि क्रिया के विषय देवसी, पक्खी, चौमासी सवत्सरी सबंधी जो कोई पाप दोप अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छामिदुक्कड।

द्वादश–भावना

अनित्य भावना नित्य नही, काल आया नही शरणो रे॥
चारो गति छकाय मे,अनत काल हुयो फिरणो रे॥प्रा०॥१८१॥
एकत्व एकलो आवियो, शरीर कर्म से भिन्नो रे ॥
शरीर औदारिक अपावन,सर्व जीव को चिन्नो रे॥प्रा०॥१८२॥
आश्रव, सवर, निर्जरा, लोक मे बहुविध भटक्यो रे ॥
समकित शुद्ध न आराधियो, धर्म बिना यो अटक्यो रे।प्रा १८३।
ऐसी आलोयणा प्ररूपणा, नित्य-२ करजो भावे रे ॥
शुद्ध मार्ग प्ररूपणा, उत्तम ने सुहावे रे ॥प्रा०॥१८४॥
सम्वत् उगणीसे छत्तीस का, धूलिया शहर मझारो रे ॥
कृष्ण गुरु प्रसाद से, प्रेमराज मगलाचारो रे ॥प्रा०॥१८५॥
आत्मा दोष अनेक छे, अहो प्रभु आप स्वीकारो रे ॥
अवगुणी पर गुण करो,श्री जिन मुझ ने तारो रे॥प्रा०॥१८६॥

ऐसे शुद्ध भावो से आत्मकृत दोष-पापो की आलोचना करेंगे, करायेंगे, वे जिनेन्द्र महाप्रभु की आज्ञा के आराधक हो, उदय लोक मे सुख-शाति का अनुभव करेगे, मोह कर्म के बधन को तोड केवलज्ञान प्राप्त करके, वे यशस्वी मोक्षगामी आत्माए अचल, अविनाशी, नित्य शाश्वत, निराबाध सुखो मे लीन बनेंगी।

ओम् शाति ! शाति !! शाति !!!

श्री मानतुङ्गाचार्यविरचितम्

भक्तामर-स्तोत्रम्

[श्री आदिनाथ स्तोत्रम्]

भक्तामर-प्रणत-मौलि मणि-प्रभाणा,—
मुद्द्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम् ।
सम्यक् प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा,—
बालम्बनं भव-जले पततां जनानाम् ।१।

यः संस्तुतः सकल-वाङ्-मय तत्त्व-बोधा—
दुद्-भूत-बुद्धि-पटुभिः-सुरलोक-नाथै ।
स्तोत्रैर्-जगत्-त्रितय-चित्त-हरै—रुदारैः,
स्तोष्ये किला-हमपि त प्रथम जिनेन्द्रम् ।२।

बुद्ध्या विनापि, विबुधार्चित पादपीठ !
स्तोतुं समुद्यत-मतिर् विगत-त्रपोऽहम् ।
बाल विहाय जल-संस्थितमिन्दु बिम्ब—
मन्यः क इच्छति जन सहसा ग्रहीतुम् ।३।

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्रशशाङ्क कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल-पवनो-द्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतुमल-मम्बु-निधिं भुजाभ्याम् ।४।

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्–मुनीश !
कर्तुं स्तवं विगत–शक्ति-रपि-प्रवृत्त ।
प्रीत्यात्म–वीर्य-मविचार्य मृगो मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निज-शिशोःपरि-पालनार्थम् ।५।

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास–धाम,
त्वद्-भक्ति-रेव-मुखरीकुरुते बलान्-माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका–निकरैक–हेतु ।६।

त्वत्–संस्तवेन भव-सन्तति सन्नि-बद्धं,
पापं क्षणात्–क्षय–मुपैति शरीर भाजाम् ।
आक्रान्त–लोक–मलि–नील-मशेष–माशु,
सुर्यांशु-भिन्न-मिवशार्वर-मन्ध-कारम् ।७।

मत्वेति नाथ ! तव संस्त–वन मयेद—
मारभ्यते तनु–धियाऽपि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी–दलेषु,
मुक्ता–फल–द्य ुतिमुपैति ननूद–विन्दुः ।८।

आस्तां तव–स्तवनमस्त समस्त दोषं,
त्वत्-संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्र किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि-विकास–भांजि ।९।

नात्यद्–भुतं भुवन–भूषण ! भूत–नाथ !
भूतैर्–गुणैर्–भुवि-भवन्त–मभिष्टु–वन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्या–श्रितं य इह नात्म–समं करोति ।१०।

दृष्ट्वा भवन्त–मनि–मेष–विलोकनीयं,
नान्यत्र तोष–मुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पय शशि–कर–द्य ुति–दुग्ध–सिन्धोः,
क्षारं जलं जल–निधे–रसितुं क इच्छेत् ।११।

यै शान्त-राग-रुचिभिः परमाणु-भिस्त्वं,—
निर्मा-पितस्-त्रिभुवनैक-ललाम-भूत !
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समान-मपरं नहि रूप मस्ति ।१२।

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि,
नि शेष-निर्जित जगत्-त्रितयो-पमानम् ।
बिंबं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद् वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ।१३।

सम्पूर्ण-मंडल-शशाङ्क कला-कलाप,
शुभ्रा गुणास्-त्रिभुवनं तव लङ्-घयन्ति ।
ये संश्रितास्-त्रि-जग-दीश्वर-नाथ-मेक,
कस्तान्—निवारयति संचरतो यथेष्टम् ।१४

चित्र किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्ग—नाभिर्,
नीतं मना—गपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त—काल—मरुता—चलिता—चलेन,
किं मन्दराद्रि—शिखरं चलितं कदाचित् ।१५

निर्धूम-वर्ति-रप-वर्जित-तैल-पूर,
कृत्स्नं जगत्-त्रय-मिदं प्रकटी-करोषि ।
गम्यो न जातु मरुता चलिता-चलानां,
दीपोऽपरस्त्व-मसि नाथ जगत्-प्रकाश ।१६।

नास्त कदाचि-दुपयासि न राहु-गम्य,
स्पष्टी-करोषि सहसा युग-पज्जगन्ति ।
नाम्भो-धरो-दर-निरुद्ध-महा-प्रभाव,
सूर्या-तिशायि महिमासि मुनीन्द्र ! लोके ।१७।

नित्यो-दयंदलित-मोह-महान्ध-कारं,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारि-दानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्यो तयज्-जगद-पूर्व-शशाङ्क-विम्बम् ।१८।

किं शर्व-रीषु शशि-नाऽह्नि विवस्वता वा !
युष्मन्-मुखेन्दु-दलि-तेषु तमस्सु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनी जीव-लोके,
कार्यं कियज्-जल-धरैर्-जल-भार-नम्रैः ।१९।

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्–मणिषु याति–यथा महत्त्वं,
नैवं तु काच–शकले किरणा कुलेऽपि ।२०।

मन्ये वरं हरि–हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदय त्वयि तोष–मेति ।
किं वीक्षि-तेन भवतां भुवि येन नान्य ।
कश्चिन्-मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ।२१।

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदु-पमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र–रश्मिं,
प्राच्येव दिग्-जनयति स्फुर–दंशु–जालम् ।२२।

त्वामाम--नन्ति मुनय परमं पुमांस—,
मादित्य–वर्णममलं तमस. परस्तात् ।
त्वा–मेव सम्य–गुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्य. शिव शिव पदस्य मुनीन्द्र पन्था. ।२३।

त्वा-मव्ययं विभु मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यं,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनंत-मनंग-केतुम् ।
योगीश्वरं विदित-योग-मनेक-मेकं,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति संतः ।२४।

बुद्धस्-त्व-मेव विबुधार्-चित बुद्धि-बोधात्-,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय शङ्क-रत्वात् ।
धाताऽसि धीर ! शिव-मार्ग-विधेर्-विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषो त्तमोसि ।२५।

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति हराय नाथ !
तुभ्यं नम क्षिति-तला-मल-भूषणाय ।
तुभ्य नमस्त्रिजगत परमेश्व-राय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवो-दधि-शोष-णाय ।२६।

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्-
त्वं संश्रितो निरव-काश-तया-मुनीश ।
दोषै-रूपात्त-विविधा-श्रय जात-गर्वैं
स्वप्ना-न्तरेऽपि न कदाचि दपी क्षितोऽसि ।२७।

उच्चै-रशोक-तरु-संश्रित-मुन्-मयूख—,
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टो-ल्लसत्-किरण-मस्त-तमो-वितानं,
बिम्बं रवे-रिव पयोधर पार्श्ववर्ति ।२८।

सिंहासने मणि–मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्रा-जते तव वपु कनका-वदातम् ।
बिम्बं वियद्-विलस-दंशु-लता-वितानं,
तुङ्गो दयाद्रि-शिर सीव सहस्त्र-रश्मे ।२९।

कुन्दा-वदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपु कल-धौत-कान्तम् ।
उद्यच्-छशाङ्क-शुचि-निर्झर-वारि-धार-,
मुच्चैस्-तटं सुर-गिरे-रिव शात-कौम्भम् ।३०।

छत्र-त्रयं तव विभाति शशाङ्क-कान्त-,
मुच्चै स्थितं स्थगित-भानु-कर प्रतापम् ।
मुक्ता-फल-प्रकर–जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्या-पयत् त्रि जगत. परमेश्व-रत्वम् ।३१।

गम्भीर–तार–रव–पूरित-दिग्-विभागस्—,
त्रै-लोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति-दक्षः,
सद्धर्म-राज-जय-घोषण-घोषकः सन्,
खे दुन्दुभिर्-ध्वनति ते यशसः प्रवादी ।३२।

मन्दार–सुन्दर–नमेरु–सुपारि-जात,—
सन्तान-कादि-कुसुमो-त्कर-वृष्टि-रुद्धा ।
गधोद-विदु-शुभ-मन्द–मरुत्-प्रपाता,
दिव्या दिव पतति ते वचसां ततिर्वा ।३३।

शुम्भत्-प्रभा-वलय–भूरि–विभा विभोस्ते,
लोक–त्रय-द्युति-मतां द्युति-माक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्–दिवा-कर-निरंतर-भूरि-संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशा-मपि सोम–सौम्याम् ।३४।

स्वर्गा-पवर्ग-गम-मार्ग-विमार्ग-णेष्ट ,
सद्धर्म तत्त्व–कथनैक–पटुस्–त्रिलोक्याः ।
दिव्य-ध्वनिर्-भवति ते विशदार्थ-सर्व,

उन्निद्र-हेम-नव पंकज-पुञ्ज-कान्ति,
पर्युल्लसन् नख-मयूखा-शिखा-भिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधा परि-कल्पयन्ति ।३६।

इत्थं यथा तव विभूति-रभू ज्जिनेन्द्र !
धर्मो-पदेशन-विधौ न तथा परस्य ।
यादृक्-प्रभा दिन-कृत. प्रहतान्ध-कारा,
तादृक्-कुतो ग्रह-गणस्य विकाशि-नोऽपि ।३७।

श्च्यो-तन्-मदा-विल-विलोल-कपोल-मूल,
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरा-वताभ-मिभ-मुद्धत-मा-पतन्तं,
दृष्ट्वा-भयं भवति नो भवदा-श्रितानाम् ।३८।

भिन्नेभ-कुम्भ-गल-दुज्ज्वल-शोणि-ताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः ।
बद्ध-क्रम क्रम-गतं हरिणा-धिपोऽपि,
नाक्रा-मति क्रम-युगा-चल-संश्रितं ते ।३९।

अम्भो निधौ क्षुभित-भीषण नक्र-चक्र,
पाठीन-पीठ भयदो-ल्वण-वाड-वाग्नौ ।
रङ्ग-त्तरङ्ग-शिख-रस्थित-यान-पात्रास्,
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्-व्रजन्ति ।४४।

उद्-भूत-भीषण-जलो-दर-भार-भुग्ना.,
शोच्यां दशा-मुप-गताश्-च्युत-जीवि-ताशाः
त्वत्पाद-पंकज-रजोऽमृत दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकर-ध्वज-तुल्य रूपाः ।४५।

आपाद-कण्ठ-मुरु-शृङ्खल-वेष्टि-ताङ्गाः
गाढं वृहन्-निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघाः ।
त्वन्नाम-मंत्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्त,
सद्यः स्वयं विगत-बंध-भया भवन्ति ।४६।

मत्त-द्विपेन्द्र-मृग-राज-दवा-नलाहि—
संग्राम-वारिधि-महोदर-बन्ध-नोत्थम् ।
तस्याशु नाश-मुप-याति भयं भियेव,
यस्ता-वकं स्तव मिमं मति-मान-धीते ।४७।

स्तोत्र-स्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्-निबद्धां,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठ-गता-मजस्रं,
तं मान-तुङ्ग-मवशा समुपैति लक्ष्मीः ।४८।

इति मानतुङ्गाचार्य-विरचितम्

॥ भक्तामर-स्तोत्र-सम्पूर्णम् ॥

॥ पूज्य श्री हुक्म्यष्टकम् ॥

छन्द त्रोटक—

गृह-मोह-ममत्व—विनाशकरम्,
शुभ-संयम-भाव-रत निरतम्
सुसमाधि-युतं गणि-कीर्ति-धरम्,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ।१।
प्रशमादि-विकास-गुणैः कलित-
मुपदेश-सुधा-वलितं मुदितम् ।
महिते निज-कार्य-पथे निरतं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ।२।

भव-पातक-मान-रुजा-रहितं,
सुखदायक-भाव-युतं सततम् ।
भव भीति-हरं शिव सत्यवरं,
प्रणमामि महामुनि-हुक्मि गुरुम् ।३।

तपसा सहितं विदुषामजितं,
शशि पूर्ण-सुशोभित दिव्य मुखम् ।
रवि-तुल्य-विभाषित-दीप्ति-धरं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ।४।

मनसा, वचसा, वपुसा विमलं,
करुणा-धिषणा-गरिमादि युतम् ।
सुनयैः सुगुणैः सुकृतै-रनघं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ।५।

नगरे नगरे सुख-शान्तिकरं,
बहु-शिष्य-जनैः विनयाभिनुतम् ।
निज-कर्म-विदारकरं विशदं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ।६।

शरणागत-धारक-रक्ष-परं,
जगती-प्रथितं सुयशो-भरितम् ।
जन-संकट-नाशक-भक्तिरतं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्म गुरुम् ।७।

भव-सागर-पंक-निमग्न-नृणां,
जिन-भाषित-बोध-सुखं-प्रददौ ।
तमहं गुणसागर बुद्धि-निधिं,
प्रणमामि, महामुनि-हुक्मि गुरुम् ।८।

गुरु-हुक्म्यष्टकं-स्तोत्रम्,
मुनिज्ञानेन निर्मितम्,
पठन्ति ये नराः भक्त्या,
सिद्धि-सौधं व्रजन्ति ते ।९।

卐

कल्याणमंदिर-स्तोत्र

कल्याण – मदिर – मुदार – मवद्य – भेदि
भीताभय-प्रद-मनिन्दित-मड्घ्रि – पद्मम् ।
संसार – सागर – निमज्जदशेप – जन्तु—
पोतायमान – मभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥१॥

यस्य स्वय सुरगुरुर् - गरिमाम्बुराशेः
स्तोत्र सुविस्तृत-मतिर् न विभुर्-विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठ - स्मय - धूमकेतोस्
तस्याहमेष किल सस्तवन करिष्ये ॥२॥

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप –
मस्मादृशा. कथमधीश ! भवन्त्यधीशा. ।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशुर यदि वा दिवान्धो
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मे ? ॥३॥

मोह - क्षया - दनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यो
नून गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत ।
कल्पान्त-वान्त-पयस. प्रकटोऽपि यस्भान्
मीयेत केन जलधेर् ननु रत्न - राशिः ॥४॥

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य - गुणाकरस्य ।
बालोऽपि किं न निजबाहु–युग वितत्य
विस्तीर्णता कथयति स्वाधियाम्बु-राशेः ॥५॥

ये योगिनामपिन यान्ति गुणास्तवेशः !
वक्तु कथ भवति तेपु ममावकाश. ?
जाता तदेव - मसमीक्षित - कारितेय
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥६॥

घास्ता-मचिन्त्य-महिमा जिन ! संस्तवस्ते
नामाऽपि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्रातपोपहत - पान्थ - जनान् निदाघे
प्रीणाति पद्म - सरस. सरसोऽनिलोऽपि ॥७॥

हृद्-वर्तिनि त्वयि विभो । शिथिली भवन्ति
जन्तो क्षणेन निविडा अपि कर्म-बन्धा ।
सद्यो भुजंगममया इव मध्य - भाग-
मभ्यागते वन - शिखण्डिनि चन्दनस्य ॥८॥

मुच्यन्त एव मनुजा सहसा जिनेन्द्र ।
रौद्रैरुपद्रव - शतैस् - त्वयि वीक्षितेऽपि ।
गो - स्वामिनि स्फुरित - तेजसि दृष्टमात्रे
चौरैरिवाशु पशव प्रपलायमानैः ॥९॥

त्व तारको जिन ! कथ भविना त एव
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्त ।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुत. स किलानुभाव ॥१०॥

यस्मिन् हर - प्रभृतयोऽपि हत - प्रभावा
सोऽपि त्वया रति-पति. क्षपित क्षणेन ।
विध्यापिता हुत - भुज पयसाऽथ येन
पीत न कि तदपि दुर्धर-वाडवेन ॥११॥

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्नास्-
त्वा जन्तव कथमहो हृदये दधाना ?
जन्मोदधि लघु तरन्त्यतिलाघवेन
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभाव. ॥१२॥

क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथम निरस्तो
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्म-चोरा· ?
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके
नीलद्रुमाणि विपिनानि न कि हिमानी ॥१३॥

त्वा योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप—
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोश-देशे ।
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य—
दक्षस्य सम्भवि पद ननु कर्णिकाया: ॥१४॥

ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविन. क्षणेन
देहं विहाय परमात्म-दशा व्रजन्ति ।
तीव्रानलादुपल - भावमपास्य लोके
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदा ॥१५॥

अन्त सदैव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्व
भव्यै· कथ तदपि नाशयसे शरीरम् ?
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि
यद् विग्रह प्रशमयन्ति महानुभावा: ॥१६॥

आत्मा मनीषिभिरय त्वदभेदबुद्ध्या
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभाव· ।
पानीयमप्यमृत - मित्यनुचिन्त्यमान
किं नाम नो विषविकार-मपाकरोति ॥१७॥

त्वामेव वीततमस परवादिनोऽपि
नून विभो हरिहरादि-धिया प्रपन्ना ।
किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शखो
नो गृह्यते विविध - वर्णं - विपर्ययेण ॥१८॥

धर्मोपदेश - समये सविधानुभावा—
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ॥१६॥

चित्रं विभो ! कथमवाङ्मुख - वृन्तमेव
विष्वक् पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः ।
त्वद् - गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥२०॥

स्थाने गभीर - हृदयोदधि - सम्भवायाः
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ।
पीत्वा यतः परम - सम्मद - सङ्गभाजो
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ॥२१॥

स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर - चामरौघाः ।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि - पुङ्गवाय
ते नूनमूर्ध्व - गतयः खलु शुद्धभावाः ॥२२॥

श्यामं गभीर - गिरमुज्ज्वल - हेमरत्न—
सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम् ।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्—
चामीकराद्रि - शिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥२३॥

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन
लुप्तच्छदच्छविरशोक - तरुर्बभूव ।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥२४॥

क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्म-चौराः ?
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥१३॥

त्वा योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप—
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोश-देशे ।
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य—
दक्षस्य सम्भवि पद ननु कर्णिकायाः ॥१४॥

ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविन. क्षणेन
देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति ।
तीव्रानलादुपल - भावमपास्य लोके
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदा ॥१५॥

अन्त सदैव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्वं
भव्यैः कथ तदपि नाशयसे शरीरम् ?
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि
यद् विग्रह प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥१६॥

आत्मा मनीषिभिरय त्वदभेदबुद्ध्या
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभावः ।
पानीयमप्यमृत - मित्यनुचिन्त्यमानं
कि नाम नो विषविकार-मपाकरोति ॥१७॥

त्वामेव वीततमस परवादिनोऽपि
नून विभो हरिहरादि-धिया प्रपन्ना ।
कि काचकामलिभिरीश सितोऽपि शखो
नो गृह्यते विविध - वर्ण - विपर्ययेण ॥१८॥

धर्मोपदेश – समये सविधानुभावा—
दास्ता जनो भवति ते तरुरप्यशोक. ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोक ।।१९।।

चित्र विभो ! कथमवाड्मुख - वृन्तमेव
विष्वक् पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टि ।
त्वद् – गोचरे सुमनसा यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ।।२०।।

स्थाने गभीर - हृदयोदधि - सम्भवाया
पीयूषता तव गिर समुदीरयन्ति ।
पीत्वा यत परम - सम्मद - सङ्गभाजो
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ।।२१।।

स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो
मन्ये वदन्ति शुचय सुर - चामरौघा ।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि - पुङ्गवाय
ते नूनमूर्ध्व - गतय खलु शुद्धभावा ।।२२।।

श्याम गभीर - गिरमुज्ज्वल - हेमरत्न—
सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम् ।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्—
चामीकराद्रि - शिरसीव नवाम्बुवाहम् ।।२३।।

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन
लुप्तच्छदच्छविरशोक - तरुर्बभूव ।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !
नीरागता व्रजति को न सचेतनोऽपि ।।२४।।

भो भो प्रमादमवधूय भजध्वमेन—
मागत्य निर्वृतिपुरी प्रति सार्थवाहम् ।
एतन्निवेदयति देव ! जगत्त्रयाय
मन्ये नदन्नभिनभ सुर – दुन्दुभिस्ते ॥२५॥

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ !
तारान्वितो विधुरय विहताधिकार ।
मुक्ताकलाप - कलितोल्लसि - तातपत्र—
व्याजात् त्रिधा धृततनुर् ध्रुवमभ्युतेत ॥२६॥

स्वेन प्रपूरित - जगत्त्रय - पिण्डितेन
कान्ति-प्रताप-यशसामिव सचयेन ।
माणिक्य - हेम - रजत - प्रविनिर्मितेन
साल-त्रयेण भगवन् ! नभितो विभासि ॥२७॥

दिव्य-स्रजो जिन ! नमत्-त्रिदशाधिपाना—
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलिबन्धान् ।
पादो श्रयन्ति भवतो यदि वाऽपरत्र
त्वत्-सगते सुमनसो न रमन्त एव ॥२८॥

त्व नाथ ! जन्म - जलधे-र्विपराङ्मुखोऽपि
यत्तारयस्यसुमतो निज - पृष्ठ-लग्नान् ।
युक्त हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव
चित्र विभो ! यदसि कर्म-विपाक-शून्य ॥२९॥

विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्व
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्य-लिपिस्त्वमीश !
अज्ञानवत्यपि सदैव कथञ्चिदेव
ज्ञान त्वयि स्फुरति विश्व-विलास-हेतु ॥३०॥

प्राग्भार-सभृत-नभासि रजासि रोषा—
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ।
छायाऽपि तैस्तव न नाथ ! हता हताशो
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव पर दुरात्मा ॥३१॥

यद् गर्जदूर्जित - घनौघमदभ्र - भीम
भ्रश्यत्तडिन् मुसलमासल - घोरधारम् ।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारि दध्रे
तेनैव तस्य जिन ! दुस्तर-वारि कृत्यम् ॥३२॥

ध्वस्तोर्ध्व-केश - विकृताकृति - मर्त्यमुण्ड—
प्रालम्बभृद्-भयद - वक्त्र विनिर्यदग्नि ।
प्रेतव्रज प्रति भवन्तमपीरितो य
सोऽस्याऽभवत् प्रतिभव भव - दु ख-हेतु. ॥३३॥

धन्यास्त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्य—
माराधयन्ति विधिवद् विधुतान्यकृत्या ।
भक्त्योल्लसत् पुलक-पक्ष्मल-देह-देशा
पादद्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाज ॥३४॥

अस्मिन्नपार-भव - वारिनिधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवणगोचरता गतोऽसि ।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे
किं वा विपद्-विषधरी सविध समेति ॥३५॥

जन्मान्तरेऽपि तव पाद-युगं न देव !
मन्ये मया महित-मीहित-दान-दक्षम् ।
तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवाना
जातो निकेतनमहं मथिता - शयानाम् ॥३६॥

नूनं न मोह - तिमिरावृत - लोचनेन
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत् - प्रबन्ध - गतय कथमन्यथैते ॥३७॥

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव ! दुःख-पात्र
यस्मात् क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्या ॥३८॥

त्वं नाथ ! दु खि-जन-वत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्य - पुण्यवसते ! वशिना वरेण्य !
भक्त्या नते मयि महेश ! दया विधाय
दुःखाकुरोद्दलन - तत्परता विधेहि ॥३९॥

निःसख्य - सार - शरण शरण शरण्य—
मासाद्य सादित - रिपु - प्रथितावदातम् ।
त्वत् - पाद-पकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो,
वध्योऽस्मि चेद् भुवन-पावन! हा हतोऽस्मि ॥४०॥

देवेन्द्र - वन्द्य ! विदिताखिल-वस्तु-सार
संसार — तारक विभो भुवनाधिनाथ !
त्रायस्व देव करुणाह्रद ! मा पुनीहि
सीदन्तमद्य भयद - व्यसनाम्बु - राशेः ॥४१॥

यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रि - सरोरुहाणा
भक्ते फल किमपि सन्तत-सचिताया ।
तन्मे त्वदेक - शरणस्य शरण्य ! भूया
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥४२॥

इत्थ समाहित-धियो विधिवज्-जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्-पुलक-कञ्चुकिताङ्गभागाः ।
त्वद्-बिम्ब-निर्मल - मुखाम्बुज - बद्धलक्ष्या
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः ॥४३॥

जन - नयन - कुमुद - चन्द्र !
प्रभास्वराः स्वर्ग-सम्पदो भुक्त्वा ।
ते विगलित - मल - निचया
अचिरान् - मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥४४॥

इति श्री सिद्धसेनदिवाकर-विरचित कल्याणमंदिर-स्तोत्रम्

पच्चीस बोल का थोकडा

पहले बोले गति ४—नरक गति, तिर्यंच गति, मनुष्य गति, देवगति ।

दूसरे बोले जाति ५—एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय ।

तीजे बोले काया ६—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय ।

चौथे बोले इन्द्रिय ५—श्रोतेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शइन्द्रिय ।

पाचवें बोले पर्याप्ति ६—आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति, (वचन पर्याप्ति), मन पर्याप्ति ।

छठे बोले प्राण १०—श्रोत्रेन्द्रिय बल प्राण, चक्षुरिन्द्रिय बल प्राण, घ्राणेन्द्रिय बल प्राण, रसनेन्द्रिय बल प्राण, स्पर्शनेन्द्रिय बल प्राण, मनो बल प्राण, वचन बल प्राण, काय बल प्राण, श्वासोच्छ्वास बल प्राण, आयुष्य बल प्राण ।

सातवे बोले शरीर ५—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण ।

आठवे बोले योग १५—चार मन का, चार वचन, सात काया का । सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, मिश्र मनोयोग, व्यवहार मनोयोग, सत्य भाषा, असत्य भाषा, मिश्र भाषा, व्यवहार भाषा, औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रिय-वैक्रिय मिश्र, आहारक-आहारक मिश्र, कार्मण ।

नववे बोले उपयोग १२—पांच ज्ञान-तीन अज्ञान, चार दर्शन ज्ञान ५—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन-पर्यायज्ञान, केवलज्ञान । अज्ञान ३—मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभगज्ञान । दर्शन ४—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन ।

दसवें बोले कर्म ८—१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयु, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय ।

ग्यारहवे बोले गुणस्थान १४—मिथ्यात्व गुणस्थान, सास्वादन गुण०, मिश्र गुण०, अविरति सम्यग्दृष्टि गुण०, देशव्रविरति श्रावक गुण०, प्रमादी साधु गुण०, अप्रमादी साधु गुण०, नियट्टिबादर गुण०, अनियट्टिबादर गुण, सूक्ष्म-सम्पराय गुण०, उपशान्त मोहनीय गुण०, क्षीणमोहनीय गुण०, सयोगी केवली गुण०, अयोगी केवली गुणस्थान ।

बारहवे बोले पाच इन्द्रियो के तेईस विषय और २४० विकार । श्रोत्रेन्द्रिय के ३ विषय—जीवशब्द, अजीवशब्द, मिश्रशब्द । चक्षुइन्द्रिय के ५ विषय—काला, नीला, लाल, पीला, सफेद । घ्राणेन्द्रिय के २ विषय—सुरभिगन्ध, दुरभि-गन्ध । रसनेन्द्रिय के ५ विषय—तीखा, कडवा, कषैला, खट्टा, मीठा । स्पर्शनेन्द्रिय के ८ विषय—कर्कश (खरदरा), मृदु (सुहाला), लघु (हल्का), गुरु (भारो), शीत (ठण्डा), उष्ण (गर्म), रूक्ष (लूखा), स्निग्ध (चोपडिया) ।

तेरहवें बोले मिथ्यात्व के १० भेद—जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, अजीव को जीव श्रद्धे तो मि०, धर्म

को अधर्म श्रद्धे तो मि०, अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मि०, साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, असाधु को साधु श्रद्धे तो मि०, ससार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मि०, मोक्ष के मार्ग को ससार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, आठ कर्मों से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो मि०, आठ कर्मों से अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व ।

चौदहवे बोले छोटी नव तत्त्व के ११५ भेद—जीव तत्त्व, अजीव तत्त्व, पुण्य तत्त्व, पाप तत्त्व, आश्रव, तत्व सवर तत्त्व, निर्जरा तत्त्व, वन्धतत्त्व, मोक्ष तत्त्व । जीव के १४, अजीव के १४, पुण्य के ९, पाप के १८, आश्रव के २०, संवर के २०, निर्जरा के १२, वन्ध के ४, मोक्ष के ४=कुल ११५ भेद ।

जीव के १४ भेद

सूक्ष्म एकेन्द्रिय के दो भेद-अपर्याप्त और पर्याप्त ।
वादर एकेन्द्रिदय के " " " " "
वेइन्द्रिय के " " " " "
तेइन्द्रिय के " " " " "
चउरिन्द्रिय के " " " " "
असन्नी पंचेन्द्रिय के " " " " "
सन्नी पचेन्द्रिय के " " " " "

अजीव के १४ भेद

धर्मास्तिकाय के तीन भेद—स्कन्ध, देश और प्रदेश ।
अधर्मास्तिकाय के तीन भेद—स्कन्ध, देश और प्रदेश ।
आकाशास्तिकाय के तीन भेद—स्कन्ध, देश और प्रदेश ।
ये नव और दसवा काल । ये दस भेद अरूपी अजीव के

होते हैं। रूपी पुद्गल के चार भेद—स्कन्ध, देश, प्रदेश, और परमाणु पुद्गल। मे चौदह भेद अजीव के होते है।

पुण्य के ६ भेद

अन्न पुण्य—अन्न देने से पुण्य होता है।

पान पुण्य—पानी देने से पुण्य होता है।

लयन पुण्य—जगह, स्थान वगैरह देने से पुण्य होता है।

शयन पुण्य—शय्या, पाट, पाटला, बाजोट वगैरह देने से पुण्य होता है।

वत्थ—(वस्त्र) पुण्य-वस्त्र (कपडा) देने से पुण्य होता है।

मन पुण्य—शुभ मन रखने से—दानरूप, शीलरूप, भावरूप, और दयारूप आदि शुभ मन रखने से पुण्य होता है।

वचन पुण्य—मुख से शुभ प्रिय वचन बोलने से पुण्य होता है।

काय पुण्य—काया द्वारा दया पालने से, काया द्वारा सेवा चाकरी, विनय वैयावच्च करने से पुण्य होता है।

नमस्कार पुण्य अधिक गुणवान् को नमस्कार करने से पुण्य होता है।

पाप के १८ भेद

प्राणातिपात— जीव की हिंसा करना।

मृषावाद— असत्य-झूठ बोलना।

अदत्तादान— बिना दी हुई वस्तु को लेना (चोरी करना)।

मैथुन— कुशील सेवन करना।

परिग्रह—	द्रव्य आदि रखना, ममता रखना ।
क्रोध—	गुस्सा करना, खुद तपना, दूसरो को तपाना ।
मान—	अहकार (घमण्ड) करना ।
माया—	छल कपट करना, ठगाई करना ।
लोभ—	तृष्णा बढाना, मूर्च्छा (गृद्धपना) रखना ।
राग—	मनोज्ञ वस्तु पर स्नेह रखना, प्रीति करना ।
द्वेष—	ग्रमनोज्ञ वस्तु पर द्वेष करना ।
कलह—	क्लेश करना ।
अभ्याख्यान—	झूठा कलक (आल) लगाना ।
पैशुन्य—	दूसरे की चाड़ी-चुगली करना ।
परपरिवाद—	दूसरे का अवर्णवाद (निन्दा) बोलना ।
रति ग्ररति—	पाच इन्द्रियो के तेईस विषयो मे से मनोज्ञ वस्तु पर प्रसन्न होना, ग्रमनोज्ञ वस्तु पर नाराज होना ।
मायामृषावाद—	कपट सहित झूठ बोलना, कपटाई मे कपटाई करना ।
मिथ्या-दर्शन शल्य—	कुदेव, कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा रखना ।

ग्राश्रव के २० भेद

मिथ्यात्व—	मिथ्यात्व को सेवे सो ग्राश्रव ।
अव्रत —	पच्चक्खाण नही करे सो आश्रव ।
प्रमाद —	पांच प्रमाद सेवे सो ग्राश्रव ।

कषाय—	पचीस कषाय सेवे सो आश्रव ।
अशुभ योग—	अशुभ योग प्रवर्तावे सो आश्रव ।
प्राणातिपात—	जीव की हिंसा करे सो आश्रव ।
मृषावाद—	झूठ बोले सो आश्रव ।
अदत्तादान—	चोरी करे सो आश्रव ।
मैथुन—	कुशील सेवे सो आश्रव ।
परिग्रह—	धन, कञ्चन वगैरह रखे, ममता रखे सो आश्रव ।
श्रोत्रेन्द्रिय—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
चक्षुरिन्द्रिय—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
घ्राणेन्द्रिय—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
रसनेन्द्रिय—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
स्पर्शनेन्द्रिय—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
मन—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
वचन—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
काया—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
काया—	वश मे न रखे सो आश्रव ।
भंड-उपकरण—	अयतना से लेवे और अयतना से रखे सो आश्रव ।
सुई-कुशाग्रमात्र—	अयतना से लेवे और अयतना से रखे सो आश्रव ।

संवर के २० भेद

समकित सवर, व्रत पच्चक्खाण करे सो सवर। प्रमाद नही करे सो संवर। कषाय नही करे सो संवर। शुभ योग प्रवर्ति सो संवर। प्राणातिपात—जीव की हिंसा नही करे सो संवर। मृषावाद—झूठ नही बोले सो सवर। अदत्तादान—चोरी नही करे सो सवर। अदत्तादान—चोरी नही करे सो संवर। मैथुन—कुशील नही सेवे सो सवर।
परिग्रह— ममता नही रखे सो संवर।
श्रोत्रेन्द्रिय— वश करे सो संवर।
चक्षुरिन्द्रिय— " " "।
घ्राणेन्द्रिय— " " "।
रसनेन्द्रिय— " " "।
स्पर्शनेन्द्रिय— " " "।
मन— " " "।
वचन— " " "।
काया— " " "।
भंड उपकरण यतना से लेवे और यतना से रखे सो सवर।
सुई-कुशाग्र मात्र यतना से लेवे यतना से रखे सो सवर।

निर्जरा के १२ भेद

अनशन, ऊनोदरी, भिक्षाचर्या, रसपरित्याग, कायक्लेश, प्रतिसलीनता, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच्च (वैयावृत्य), स्वाध्याय, ध्यान, व्युत्सर्ग अर्थात् कायोत्सर्ग।

बन्ध के ४ भेद—प्रकृति बन्ध, स्थिति बन्ध, अनुभाग बन्ध, प्रदेश बन्ध।

मोक्ष के ४ भेद—सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र, सम्यक् तप ।

पन्द्रहवे बोले आत्मा ८—द्रव्य आत्मा, कषाय आत्मा, योग आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा, दर्शन आत्मा, चारित्र आत्मा, वीर्य आत्मा ।

सोलहवें बोले दण्डक—सात नारकी का एक दडक । सात नारकी के नाम-घम्मा, वंसा, सीला, अजणा, रिट्ठा, मघा और माघवई । इनके गोत्र—रत्नप्रभा, शर्करा प्रभा, वालुका प्रभा, पंक प्रभा, धूम प्रभा, तमः प्रभा और तम-स्तम. प्रभा । दस भवनपतियो के दस दण्डक, उनके नाम—असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युतकुमार, अग्नि-कुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार, पवनकुमार, स्तनितकुमार । पाच स्थावरो के पाच दण्डक । तीन विकले-न्द्रियो के तीन दण्डक, तिर्यंच पंचेन्द्रिय का एक दण्डक, मनुष्य का एक दण्डक । वाणव्यन्तर देवता का एक दण्डक । ज्योतिषी देवता का एक दण्डक । वैमानिक देवता का एक दण्डक । कुल २४ दण्डक ।

सत्रहवे बोले लेश्या छ —कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या, तेजो लेश्या, पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या ।

अठारहवें-बोले दृष्टि तीन—सम्यक् दृष्टि, मिथ्या दृष्टि, सम्यक् मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि) ।

उन्नीसवें बोले ध्यान चार—आर्त्त ध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान ।

बीसवें बोले छह द्रव्य के तीस भेद

द्रव्य/ /भेद—	द्रव्य से	क्षेत्र से	काल से	भाव से	गुण से
धर्मास्तिकाय	एक द्रव्य	लोक प्रमाण	आदिअ्रत रहित	अरूपी, अजीव, शाश्वत, लोक-व्यापी, असख्य प्रदेशी	चलन गुण (पानी में मछली का दृष्टात)
अधर्मास्तिकाय	,,	,,	,,	,, ,, ,, ,,	स्थिर गुण (थके हुए पथिक को छाया का दृष्टांत
आकाशास्तिकाय	,,	लोकालोक प्रमाण	,,	,, ,, ,, सर्वंव्यापी अनत प्रदेशी	पोलार गुण (दूध मे पताशे का दृष्टात)
काल	अनंत द्रव्य	अढाई द्वीप प्रमाण	,,	,, ,, ,, अढाई द्वीप व्यापी अप्रदेशी	वर्तन गुण (कपडे को कैंची का दृष्टात)
जीवास्तिकाय	,,	लोक प्रमाण	,,	,, जीव ,, लोक व्यापी अनंत प्रदेशी	उपयोग गुण (चन्द्रमा की कला का दृष्टांत)
पुद्गलास्तिकाय	,,	,,	,,	रूपी, अजीव, ,, लोक व्यापी सख्यात, असख्यात, अनत प्रदेशी	पूरण-गलन गुण (बादल का दृष्टात)

इक्कीसवें बोले राशि दो - जीव राशि, अजीवराशि ।
राशि के ५६३ और अजीव राशि के ५६० भेद होते हैं ।

बाईसवें बोले श्रावकजी के बारह व्रत ।

पहले अहिंसा व्रत मे श्रावकजी त्रस जीव को मारे
मरावे नही, मन, वचन, काया से । दूसरे सत्य व्रत
ावकजी मोटा (स्थूल) झूठ बोले नही, बोलावे नही,
वचन, काया से । तीसरे अचौर्य व्रत मे श्रावकजी
(स्थूल) चोरी करे नही, करावे नही, मन वचन,
से । चौथे परदार विवर्जन एव स्वदार सतोष व्रत मे
कजी पर-स्त्री सेवन का त्याग करे और अपनी स्त्री की
दा करे । पाचवें परिग्रह परिमाण व्रत मे श्रावकजी
ह की मर्यादा करे । छठे दिशा परिमाण व्रत मे
कजी छह (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिणी, ऊ ची, नीची)
की मर्यादा करे । सातवे उपभोग परिभोग परिमाण
मे श्रावकजी छब्बीस बोल की मर्यादा करे और पन्द्रह
दान का त्याग करे । आठवे अनर्थ दण्ड विरमण व्रत
ावकजी अनर्थ दण्ड का त्याग करे । नववें सामायिक
मे श्रावकजी प्रतिदिन शुद्ध सामायिक करे । (सामायिक
नियम रखे) । दसवें देशावकासिक व्रत मे श्रावकजी
वकाशिक पौषध करे, सवर करे, चौदह नियम चितारे ।
हवें पौषधोपवास व्रत मे श्रावकजी प्रतिपूर्ण पौषध करे ।
हवें अतिथि सविभाग व्रत मे श्रावकजी प्रतिदिन साधुजी को
ादि चोदह प्रकार को निर्दोप वस्तुओ का उनके आव-
तानुसार दान देवे । तथा दान की भावना रखे ।

तेईसवे बोले साधुजी के पाच महाव्रत ।

पहले महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से

जीव की हिंसा करे नही, करावे नही, करते हुए को भला जाने नही, मन, वचन, काया से (तीन करण तीन योग से) ।

दूसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से भूठ बोले नही, बोलावे नही, बोलते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन, काया से (तीन करण तीन योग से) ।

तीसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से चोरी करे नही, करावे नही, करते हुए को भला जाने नही, मन, वचन, काया से (तीन करण तीन योग से) ।

चौथे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से मैथुन सेवे नही, सेवावे नही, सेवते हुए को भला जाने नही, मन, वचन, काया से (तीन करण तीन योग से) ।

पाचवे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से परिग्रह रखे नही, रखावे नही, रखते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन, काया से (तीन करण तीन योग से) ।

चौबीसवे बोले भागा ४९

११ आक एक ग्यारह को भागा उपजे नव—एक करण एक योग से कहना—१ करूं नही मनसा, २ करूं नही, वयसा, ३ करूं नही कायसा, ४ कराऊ नही मनसा, ५ कराऊं नही वयसा, ६ कराऊं नही कायसा, ७ अनुमोदूं नही मनसा, ८ अनुमोदूं नही वयसा, ९ अनुमोदूं नही कायसा ।

१२ आक एक बारह को भागा उपजे नव—एक करण दो योग से कहना—१ करू नही मनसा वयसा, २ करूं

नहीं मनसा कायसा, ३ करूं नही वयसा कायसा, ४ कराऊं नही मनसा वयसा, ५ कराऊ नही मनसा कायसा, ६ कराऊं नही वयसा कायसा ७ अनुमोदू नही मनसा वयसा, ८ अनु-मोदू नही मनसा कायसा, ९ अनुमोदू नही वयसा कायसा।

१३ आक एक तेरह को भागा उपजे तीन—एक करण तीन योग से कहना—१ करूं नही मनसा वयसा कायसा, २ कराऊ नही मनसा वयसा कायसा, ३ अनुमोदूं नही मनसा वयसा कायसा।

२१ आक एक इक्कीस को भागा उपजे नव—दो करण एक योग से कहना—१ करू नही कराऊ नही मनसा, २ करु नही कराऊ नही वयसा, ३ करू नही कराऊ नही कायसा, ४ करू नही अनुमोदूं नही मनसा, ५ करू नही अनुमोदूं नही वयसा, ६ करू नही अनुमोदू नही कायसा, ७ कराऊ नही अनुमोदू नही मनसा, ८ कराऊं नही अनु-मोदू नही वयसा ९ कराऊ नही अनुमोदूं नही कायसा।

२२ आक एक बाईस को भागा उपजे नव—दो करण दो योग से कहना—करूं नही कराऊं नही मनसा वयसा, २ करू नही कराऊं नही मनसा कायसा, ३ करू नही कराऊ नही वयसा कायसा, ४ करू नही अनुमोदू नही मनसा वयसा, ५ करूं नही अनुमोदू नही मनसा कायसा, ६ करू नही अनुमोदू नही वयसा कायसा, ७ कराऊ नही अनुमोदू नही मनसा वयसा, ८ कराऊ नही अनुमोदू नही मनसा कायसा, ९ कराऊं नही अनुमोदू नही वयसा कायसा।

२३ आक एक तेईस को भागा उपजे तीन—दो करण

तीन योग से कहना—१ करूं नही कराऊं नही मनसा वयसा कायसा, २ करू नही अनुमोदूं नही मनसा वयसा कायसा, ३ करारू नही अनुमोदू नही मनसा वयसा कायसा ।

३१ आक एक इकतीस को भागा उपजे तीन-तीन करण एक योग मे कहना—१ करू नही कराऊं नही अनुमोदू नही मनसा, २ करू नही कराऊ नही अनुमोदू नही वयसा ३ करू नही कराऊं नही अनुमोदू नही कायसा ।

३२ आक एक बत्तीस को भांगा उपजे तीन-तीन करण दो योग से कहना—१ करूं नही कराऊ नही अनुमोदूं नही मनसा वयसा, २ करू नही कराऊं नही अनुमोदू नहीं मनसा कायसा, ३ करू नही कराऊ नही अनुमोदू नहीं वयसा कायसा ।

३३ आक एक तेतीस को भागो उपजे एक-तीन करण तीन योग से कहना—१ करू नहीं कराऊं नही अनुमोदूं नहीं मनसा वयसा कायसा ।

पचीसवे बोले चारित्र पाच—१ सामायिक चारित्र, २ छेदोपस्थापनीय चारित्र, ३ परिहारविशुद्धि चारित्र, ४ सूक्ष्मसपराय चारित्र, ५ यथाख्यात चारित्र ।

चौदह नियम

त्याग एव मर्यादा का जीवन मे महत्वपूर्ण स्थान है। इहलोक व परलोक दोनो को सुखमय बनाने का एकमात्र साधन ही त्याग व मर्यादा' है। इसी तथ्य को ध्यान मे रखते हुए श्रावक ही क्या प्रत्येक धर्मप्रेमी सद्गृहस्थ को चाहिए कि वह प्रतिदिन प्रात निम्न चौदह नियमो को ग्रहण करे एव आवश्यकता के अनुसार मर्यादा करके उसके उपरात त्याग करले। जितना त्याग उतनी ही शाति। चौदह नियम धारण-करने से समुद्र जितना पाप घटकर बूद के बराबर रह जाता है।

१. **सचित्त**—कच्चा पानी, हरी वनस्पति, फल, पान, सचित्त नमक, कच्चा पूरा धान आदि सचित्त (जीव सहित) वस्तुओ का परिमाण करना।

२. **द्रव्य**—रोटी, दाल, शाक, पूडी, पापड, पान, सुपारी, चूर्ण, रबडी, घेवर, खीर, चाय, दवा आदि द्रव्यो का परिमाण करना।

३ **विगय**—घी, तेल, दूध, दही व मीठा—इन पाचो विगय का परिमाण करना।

४. **उपानह**—जूते, चप्पल, मौजे आदि की मर्यादा करना।

५ **ताम्बूल**—पान, सुपारी, इलायची, लौग, चूर्ण आदि मुखवास की मर्यादा करना।

६ **वस्त्र**—पहनने-ओढने के सारे वस्त्रो की मर्यादा करना।

७. **कुसुम**—सूघने की वस्तु (फूल-इतर आदि) की मर्यादा करना।

८ **वाहन**—साईकिल, स्कूटर, मोटर, रेल, हाथी, घोडा आदि वाहनो की मर्यादा करना।

९. **शयन**—पलंग, खाट, बिछौने, आदि की मर्यादा करना।

१०. **विलेपन**—केसर, चन्दन, तेल, उबटन आदि की मर्यादा करना।

११ **अब्रह्म**—मैथुन-सेवन का त्याग करना या मर्यादा करना।

१२. **दिशा**—ऊची, नीची, तिरछी दिशा मे जाने की मर्यादा करना।

१३. **स्नान**—स्नान एव स्नान के लिए जल की मर्यादा करना।

१४. **भक्त**—भोजन (कितने समय व कितना) की मर्यादा करना।

श्रावक के तीन मनोरथ

श्रावक के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रतिदिन प्रात काल सामायिक करते समय या यो ही शुभ मनोरथो के द्वारा भविष्य के लिए शुभ सकल्प करे। भगवान महावीर ने स्थानांग सूत्र के तीसरे स्थान मे तीन मनोरथो का वर्णन किया है—

१ पहले मनोरथ में श्रावक यह विचार करे कि वह

दिन धन्य होगा, जब मैं अपने धन-सपत्ति रूप परिग्रह का त्याग करूंगा। यह परिग्रह मेरी आत्मा के लिए सबसे बडा बन्धन है। यह ममता का जहर आध्यात्मिक जीवन को दूषित कर रहा है। धन का सच्चा उपयोग सग्रह मे अथवा अपने स्वार्थ के पोषण मे नही है, प्रत्युत अर्पण कर देने मे है। अस्तु, जिस दिन मैं अपने परिग्रह को त्याग कर प्रसन्नता का अनुभव करूंगा, ममता के भार से हलका होऊंगा, वह दिन मेरे लिए महान कल्याणकारी होगा।

२ दूसरे मनोरथ मे श्रावक यह विचार करे कि वह दिन धन्य होगा, जब मैं संसार की मोह-माया और विषय-वासना का त्याग करके साधु-जीवन स्वीकार करूंगा। अहिंसा आदि पाच महाव्रतो को धारण करके एव परीषह-उपसर्गों को समभाव से सहन करते हुए जिस दिन मैं मुनि-पद की ऊची भूमिका में विचरण करूंगा, वह दिन मेरे लिए महान् कल्याणकारी होगा।

३ तीसरे मनोरथ मे श्रावक यह चितन करे कि वह दिन धन्य होगा, जब मैं अपनी सयम-यात्रा को सकुशल (निर्विघ्न भाव से) पूर्ण कर अन्त समय मे आलोचना, निंदा व गर्हा करके सथारा ग्रहण करूंगा। सब प्रकार की उपधि, आहार और जीवन की ममता का भी त्याग कर जिस दिन मैं पूर्ण रूप से अपने आपको वीतराग भगवान् की उपासना मे लगा दूंगा, वह दिन मेरे लिए परम कल्याणकारी होगा।

दान शील तप भावना

❀ दान के प्रभाव से शालिभद्र को अपरिमित ऋद्धि मिली, सयम पालकर वे सर्वार्थसिद्ध मे गए एव वहा से मनुष्य-भव प्राप्त कर सिद्ध-गति को प्राप्त करेंगे—ऐसा सोच-कर सुपात्र-दान देना चाहिये।

❀ शीलव्रत के प्रभाव से सेठ सुदर्शन की शूली का सिहासन बन गया और कलावती के कटे हुए हाथ नव पल्लव के समान विकसित हुए—ऐसा सोचकर शृद्ध ब्रह्मचर्य (शील) का पालन करना चाहिए।

❀ तप के प्रभाव से धन्नामुनि, हरिकेशी मुनि और ढढण ऋषि आदि कर्म खपाकर मुक्ति को प्राप्त हुए—ऐसा सोचकर निर्मल तप की आराधना करनी चाहिए।

❀ भावना के प्रभाव से प्रसन्नचदराजर्षि, इलायची-कुमार, कपिलमुनि, स्कधकमुनि के चार सौ निनानवे शिष्य, भरत चक्रवर्ती एव माता मरुदेवी आदि ने मुक्ति प्राप्त की, ऐसा सोचकर शुद्ध भावना भानी चाहिए।

दिन का चौघड़िया

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल

रात्रि का चौघड़िया

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

दिन का चौघडिया सूर्योदय से प्रारम्भ होता है प्रत्येक प्रहर जितने कालमान मे दो चौघड़िये पूर्ण हो जाते हैं इसी प्रकार रात्रि के चौघड़िये समझने चाहिए ।

सिद्धियोग

१	६	११	शुक्र
२	७	१२	बुध
३	८	१३	मगल
४	९	१४	शनि
५	१०	१५	गुरु

सिद्धि योग मे किये हुए शुभ कार्य सफल होते हैं कौन-सी तिथि और कौन-से वार को सिद्धि योग होता है यह यन्त्र से स्पष्टतया समझाया गया है।

तप करने का फल

तप करने से नीचे लिखे माफिक नरक आयुष्य कम होती है यानी नरक मे रहकर इतने वर्ष दुःख भोगने से जो कर्म खपते हैं वह कर्म इन तपो से खपते हैं।

१ नमुक्कारसी से—
सौ वर्ष का

१ पोरिसी से—
एक हजार वर्ष का

१ साढ पोरिसी से—
दस हजार वर्ष का

१ पुरिमड्ढ से—
एक लाख वर्ष का

१ एकासणे से—
दस लाख वर्ष का

१ नीवी से—
एक क्रोड वर्ष का

१ एकलठाणे से—
दस क्रोड वर्ष का

१ एकलदन्ती से—
सौ क्रोड वर्ष का

१ आयम्बिल से—
एक हजार क्रोड वर्ष का

१ उपवास से—
दस हजार क्रोड वर्ष का

१ छट (बेले) से—
एक लाख क्रोड वर्ष का

१ अष्टम तेले से—
दस लाख क्रोड

एक अटठ्म पर हर उपवास की वृद्धि से

॥ पूज्य श्री हुक्म्यष्टकम् ॥

छन्द–त्रोटक—

गृह्-मोह्-ममत्व-विनाशकरम्,
शुभ–सयम–भाव-रत विरत
सुकमाधि-युतं गणि-कीर्ति-धरम्,
प्रणमामि महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ॥१.

प्रशमादि–विकास-गुणैः कलित,
मुपदेश-सुधा-वलित मुदितम् ।
महिते निज-कार्य-पथे निरत,
प्रणमामि महामुनि, हुक्मि गुरुम् ॥२

भव–पातक-मान-रुजा-रहितं,
सुखदायक-भाव-युत सततम् ।
भव भीति-हरं शिव सत्यवरं,
प्रणमामि महामुनि-हुक्मि गुरुम् ॥३.

तपसा सहित विदुषामजित,
शशि पूर्ण-सुशोभित दिव्य मुखम् ।
रवि-तुल्य-विभासित-दीप्ति-घर,
प्रणमामि महामुनि-हुक्मि-गुरुम् ॥४.

मृत्यु-योग

१	६	११	रवि, मगल
२	७	१२	सोम, गुरु
३	८	१३	वुध
४	९	१४	शुक्र
५	१२	१५	शनि

सूचना—मृत्यु योग अशुभ माना जाता है, इसलिए कोई भी शुभ कार्य इन दिनो मे प्रारम्भ नही करना चाहिये ।

प्रातःकालीन प्रार्थना

श्री महावीर स्वामी की, सदा जय हो सदा जय हो ।
पवित्र पावन जिनेश्वर की, सदा जय हो सदा जय हो ।

तुम्हीं हो देव देवन के, तुम्ही हो पीर पैगम्बर ।
तुम्हीं ब्रह्मा तुम्ही विष्णु, सदा जय हो सदा जय हो ॥२॥

तुम्हारे ज्ञान खजाने की, महिमा बहुत भारी है ।
लुटाने से बढ़े हर दम, सदा जय हो सदा जय हो ॥३॥

तुम्हारी ध्यान मुद्रा से, अलौकिक शाति झरती है ।
सिह भी गोद पर सोते, सदा जय हो सदा जय हो ॥४॥

तुम्हारा नाम लेने से, जागती वीरता भारी ।
हटाते कर्म लश्कर को, सदा जय हो सदा जय हो ॥५॥

तुम्हारा सघ सदा जय हो, मुनि मोतीलाल सदा जय हो ।
जवाहरलाल पूज्य गुरुराज, सदा जय हो सदा जय हो ॥६॥
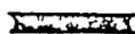
त्रिशला–नन्दन

तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी

जय बोलो त्रिशलानन्दन की,
जन-जन के दु.ख–निकन्दन की ॥ टेर ॥

जिन वाणी का आधार हमे,
यह वाणी जन शृगार बने ।
इस अनेकान्तमय दर्शन की 'जय' ॥ १ ॥

यह वीतराग उपदेश हमें,
भव भव मे शान्ति प्रदान करे ।
यही आश पिपासा हो, हर मन की 'जय' ॥ २ ॥

हमे सत्य अहिसा प्यारा है, यही एक हमारा नारा है ।
शुद्ध सयम ज्ञान व दर्शन की ॥ ३ ॥

है वर्तमान आचार्य प्रवर, श्री नानालालजी महागरिणवर ।
जय समता दर्शन सर्जन की ।। ४ ।।

जो इन चरणो मे आता है. भवसागर से तिर जाता है ।
पूज्य गणेशी के पटधर की ।। ५ ।।

सुबह और शाम की

सुबह और शाम की, प्रभु जी के नाम की ।
फेरो एक माला, हो–फेरो एक माला ।। टेर ।।

सकलसार नवकार मन्त्र है, परमेष्ठी की माला ।
नरकादिक दुर्गति का सचमुच, जड देती है ताला ।।

कर्मों का जाला, मिटे, तत्काला, फेरो एक माला ।।
सुदर्शन और सीताजी ने, फेरी थी यह माला ।
शूलो का सिहासन हो गया, शीतल हो गई ज्वाला ।

शील जिसने पाला, सच्चा है रखवाला ।
फेरो एक माला ।।

सुमिरण करके श्रीमती ने, नाग उठाया काला,
महा भयकर विषधर था, वह बनी फूल की माला ।।
धर्म का प्याला, पियो प्यारे लाला, फेरो एक माला ।
द्रोपदी का चीर बढाया, दु.शासन मद गाला ।
मैनासुन्दरी श्रीपाल का, जीवन बना विशाला ।
सुभद्रा ने तोला, चम्पा द्वार खोला, फेरो एक माला
राजदुलारी बालकुमारी, देखो चन्दनबाला ।

महा भयंकर कष्ट उठाया, सिर मूंडा था मूला ।
तपस्या का तेला, सब दुःख ठेला, फेरो एक माला ॥
समय बीतता जाये मित्रो, इसको सफल बनालो ।
सद्गुरु के चरणो में आ, परमेष्ठी ध्यान लगा लो ॥
गुण गावे भोला, हरिऋषि बोला, फेरो एक माला ॥

मिला ना तुम–सा नाथ

आओ आओ अय शांति प्रभुजी, शाति के दातार ॥ टेर ॥
आते ही माता के गर्भ मे, दूर किया जग रोग ।
शांति शाति की थी सब भू पर,
हर्षे थे सब लोग ॥ १ ॥ आओ ॥
जैसे रक्षा की कपोत की, कर सब दुःख का नाश ।
त्रिविध दुःख मे मैं तो फसा हू,
एक तुम्हारी आश ॥ २ ॥ आओ ॥
भटकत आयो दशो दिशा मे, मिला न तुम–सा नाथ ।
आया शरण मे है 'श्रेयस्कर' ।
पकड़ो मेरा हाथ ॥ ३ ॥ आओ ॥

है नाम अनन्तानन्त प्रभो

ॐ शाति जिनेश्वर शांति करो,
अब तो भव-भव की भ्रांति हरो ।
हैं नाम अनन्तानन्त प्रभो, जो गाते संत महंत विभो ।
सत् शिव सुन्दर निज रूप खरो, ॐ शाति........ ... ॥१॥
हो सब धर्मो के सार तुम्ही. सत् शास्त्रो के आधार तुम्ही ।
हे नाथ चराचर ! मे विचरो, ॐ शाति... .... . ॥२॥

शरणागत रक्षक हो स्वामी, क्या विनय करें अन्तर्यामी ।
सच्चिदानन्द–मय रस वितरो, ॐ शाति · ।।३।।

हम सव मिल कर गुण गाते हैं,
श्री चरण शरण मे आते हैं ।
जन–जन के मन मे अमिय भरो, ॐ शाति ।।४।।

यह विश्व कुटुम्ब हमारा हो, पर अन्तर्ध्यान तुम्हारा हो ।
अचलानन्दन यह भाव भरो, ॐ शाति ···· ।।५।।

हे नाथ श्रेय अरु प्रेय जगत, उत्थान पतन का हेतु है ।
सुख श्रेय करो दु ख हेय हरो, ॐ शाति ।।६।।

आत्म-जागरण

उठ भोर भई टुक जाग सही,
भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ।
अब नीद अविद्या त्याग सही, ।। टेर ।। ।। १ ।। भ.

जग जाग उठा तू सोता है, अनमोल समय ये खोता है ।
तू काहे प्रमादी होता है । ।। २ ।। भ
ये समय नही है सोने का, है वक्त पाप मल धोने का ।
अरु सावधान चित्त होने का, ।। ३ ।। भ.
तू कौन कहा से आया है, अब गमन कहा मन भाया है ।
टुक सोच, ये अवसर पाया है, ।। ४ ।। भ
रे चेतन चतुर हिसाव लगा,
क्या खाया खरचा लाभ हुआ ।
निज ज्ञान जगा तू सभाल हिया, ।। ५ ।। भ.
गति चार चौरासी लाख रुला,
ये कठिन कठिन शिवराह
अब भूल कुमार्ग विषय मत जा, ।। ६

—गुरु महिमा—

गुरु भज गुरु भज गुरु भज मनवा,
गुरु भज्यां शिव धन पासी ।
गुरु ने ध्याकर गुरु ने पाकर,
तू भी गुरु सम बन जासी ।। टेर ।।
महाविदेह अरिहंत विराजे,
इण भव तो नहीं मिल पासी ।
गुरुदेव की कृपा हुई तो,
तू खुद अरिहंत बन जासी ।। गुरु ।।
सिद्ध प्रभु हैं सिद्ध-शिला पर,
कुण देख्या देखण जासी ।
गुरु चरण की शरण लेय तो,
सिद्ध-शिला दौडी आसी ।। गुरु ।।
प्रभु के रुठ्या गुरु शरण हैं,
झट सुमार्ग बतला देसी ।
गुरु रूठ्या नही ठौर जगत में,
गुरु तूठ्या प्रभु मिल जासी ।। गुरु ।।
गुरु तात और गुरु भ्रात है
देव ॐ गुरु जो ध्यासी ।
इण भव रिद्धि-सिद्धि पग-पग पासी,
पर-भव शिव सुख बरसाती ।। गुरु ।।
गुरु निर्ग्रन्थ मिल्या शुभ योगे,
यो अवसर फिर कद आसी ।

मोह-माया मैं भूम रह्यो तू करे है थारी-म्हारी,
ज्ञान धर्म री बाता केवे जद लागे थाने खारी। रे··।
जवानी री अकडाई मे, टेढो टेढो चाले,
पर थाने इतरी नही है मालूम, काई होसी काले।रे ··।
छोटी मोटी बणा रे हवेलिया, अठे पडी रह जासी,
दो गज कफन रो टुकडो, आखिर साथ निभासी। रे–।
तूं है पावणो चार दिना रो भूल मतीना भाई
अरे काल काकाजी आवेला थारो कठ पकड़ले जासी।रे ··।

भावना

भावना दिन रात मेरी, सब सुखी ससार।
सत्य सयम शील का प्रचार घर घर हो।
शाति और आनन्द का हर एक घर मे बास हो,
वीर वाणी पर सभी ससार का विश्वास हो।
रोग अरु भय शोक होवे दूर सब परमात्मा।
कर सके कल्याण ज्योति सब जगत् की आत्मा।।

लेलो शान्ति प्रभु रो नाम

लेलो शाति प्रभु रो नाम, जिनश्वर शाति शाति रो नाम!
धोलो दिल रा पाप तमाम, बेगी मुक्ति मिलसी। १।
नही हैं सासा रो विश्वास, अचानक रुक जावेला सास!
पूरी हुई न किणरी आस, मनरी मन मे रह जासी। २।
मत ना करजो कोई प्रमाद, करलो सागर चक्री ने याद,
लेलो नर भव रो सुस्वाद, सूरज निश्चय ढलसी। ३।
मत ना करजो आरत ध्यान, करलो समता रस रो पान!
जग मे होनहार बलवान, होनी नही टलसी। ४।

पाप अठारह त्याग

तर्ज—धीरे धीरे बोल कोई सुन..........

धीरे धीरे त्याग तू धीरे धीरे त्याग,
पाप अठारह धीरे धीरे त्याग,
झूठी शान मे दम नहीं और पाप हमारे कम नही । टेर ।

काम क्रोध मोह माया को तू त्याग
प्रभु चरणो में करले तू अनुराग
कहा मानले' यह जान ले भव भव बंधन कम नही
और पाप हमारे कम नही ।१।

नानागुरु हम आये तेरे द्वार,
भवसागर से करदो बेडा पार,
मझधार में खेवनहार तू दूर किनारा अब नही
और पाप हमारे कम नही । २ ।

कालचक्र ने घेरा दीना डार,
सदवाणी से करदो बेडापार,
हमे तार दे उबार दे तेरी महिमा कम नही
और पाप हमारे कम नही । ३ ।

मा शृंगार के प्यारे नानालाल,
तप सयम मे कर दिया कमाल,
वीर वाणी को हर प्राणी को,
तुमने सुनाया कम नहीं,
और पाप हमारे कम नही । ४ ।

फेरो एक माला

सुबह और शाम की, प्रभुजी के नाम की
फेरो एक माला, हो हो फेरो एक माला ।टेर।

सकल सार नवकार मन्त्र है परमेष्ठी की माला,
नरकादिक दुर्गति वा सचमुच जड देती है ताला ।
कर्मो का जाला, मिटे तत्काला ।१।

सुदर्शन और सीताजी ने फेरी थी यह माला,
शूली का सिहासन हो गया शीतल हो गई ज्वाला ।
शील जिसने पाला, सच्चा रखवाला ।२।

सुमिरण करके श्रीमती ने, नाग उठाया काला,
महा भयकर विषधर था वह बनी फूल की माला
धर्म का प्याला' पियो प्यारे लाला ।३।

द्रोपदी का चीर बढाया, दु शासन मद गाला
मैनासुन्दरी श्रीपाल का जीवन बना विशाला
सुभद्रा ने बोला, चम्पा द्वार खोला ।४।

राजदुलारी बालकुमारी, देखो चन्दन बाला
महा भयकर कष्ट उठाया, सिर मूडा था मूला
तपस्या का तेला, सब दु ख ठेला ।५।

समय बीतता जाये मित्रो, जीवन सफल बनालो
सद्गुरु के चरणो मे आ परमेष्ठी ध्यान लगालो
गुण गावे भोला, हरि ऋषि बोला ।६।

✠

(तर्ज—पनजी मूंडे बोल)

बोल-बोल आदेश्वर व्हाला, काई थारी मरजी रे
म्हासुं मूंडे बोल ।।

मा मरुदेवी वाट जोवती, इतरे बधाई आई रे।
आज ऋषभ जी उतरया बाग में, सुन हरसाई रे ।।

न्हाय-धोय ने गज-असवारी, करी मरुदेवी माता रे।
जाय बाग मे नदन निरक्यो, पाई साता रे ।।

राज छोडने निकल्यो ऋषभो, आ लीला अद्भूती रे।
चमर छत्र ने और सिंहासन, मोहनी मुरतो रे ।।

दिन भर बैठी वाट जोवती, कद म्हारो ऋषभो आवे रे।
कहती भरत ने आदिनाथ री, खबरा लावे रे ।।

किस्या देश मे गयो बालेसर, तुम बिन वनिता सूनी रे।
वात कहो दिल खोल लाल जी, क्यो बणग्या मूनी रे ।।

रहया मजा मे है सुखसाता, खूब किया दिल चाया रे।
अब तो बोल आदेश्वर म्हांसु, कलपे काया रे ।।

खैर, हुई सो हो गई वाला, बात भली नही कीनी रे।
गया पछै कागद नही दीनो, खबर न लीनो रे ।।

ओलम्भा मैं देऊ कठा तक, पाछो क्यू नही बोले रे।
दु.ख जननी रो देख आदेसर हियडो तोले रे ।।

अनित्य भावना भाई माता, निज आतम ने तारी रे।
केवल पामी मोक्ष सिधाया, वदना म्हारी रे ।।

मुगति रा दरवाजा खोल्या, मोरा देवी माता रे।
काल असख्या रहया उघाडा जबू, जड गया ताला रे ।।

साल बहोतर तीरथ ओसिया, "घेवर" प्रभु-गुण गाया रे।
सुरत मोहनी प्रथम जिनन्द की, प्रणमूं पाया रे" ॥

卐

दुनिया पैसे री पूजारी, पूजा करते नर और नारी।
जग मे पाप कमावे भारी, माया पैसे की हो ऽऽऽ....।
पैसे बिन माता मुख मोड़े, पिता देख करम ने फोड़े।
झगड़ा होवे घर मे चौडे, माया पैसे की हो ऽऽऽ.... ॥
पैसो मा–बापा ने प्यारो, नही तो लागे बेटो खारो।
उणने करदे घर सूं न्यारो, माया पैसे की हो ऽऽऽ ॥
पैसो पास मे राजी नारी, नहि तो ताना देवे न्यारी।
केवे पीहर मे सुख भारी, माया पैसे की हो ऽऽऽ· ॥
पैसो परदेशा ले जावे, नहि तो गलियां गोता खावे।
उणने पागल कह बतलावे, माया पैसे की हो ऽऽऽ... ॥
पैसो छप्पन भोग लगावे, नहि तो भूखा ही सो जावे।
उणने कोई नही जगावे, माया पैसे की हो ऽऽऽ ॥
पैसो बूढा ने परणावे, पैसो कन्या ने बिकवावे।
नहि तो कवारी रह जावे, माया पैसे की हो ऽऽऽ ॥
पैसा सू नर पूज्यो जावे, नहि तो याद कभी ना आवे।
उणने सगलो जग ठुकरावे, माया पैसे की हो ऽऽऽ ॥

———

(तर्ज – नर नारायण बन जायेगा....)

जय बोलो महावीर स्वामी की, घट-घट के अंतर्यामी की ॥

जिस जगती का उद्धार किया, जो आया शरण उसे पार किया
जिस पीड सुनी हर प्राणी की, जय बोलो महावीर स्वामी की ।।
जो पाप मिटाने आया था, भारत को आन जगाया था ।
उस त्रिशला-नदन ज्ञानी की, जय बोलो महावीर स्वामी की ।।
हो लाख बार प्रणाम तुम्हे, हे वीर प्रभु भगवान् तुम्हे ।
"मुनि दर्शन" मुक्ति-गामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की ।।

परमेष्ठी—महिमा

जय जय जय जयकार परमेष्ठी । जय-
जय जय भविजन—बोध—विधाता,
जय जय आतम शुद्धि विधाता ।
जय भव—भजनहार परमेष्ठी । जय

जय सब संकट चूरण—कर्त्ता,
जय सब आशा पूरण—कर्त्ता ।
जय जग मगलकार परमेष्ठी । जय

तेरा जाप जिन्होने कीना,
परमानन्द उन्होने लीना ।
कर गये खेवा पार परमेष्ठी । जय

लीना शरणा सेठ सुदर्शन,
शूली से बन गया सिहासन ।
जय जय करे नर—नार परमेष्ठी । जय

द्रौपदी चीर सभा मे हरना,
तब तेरा ही लीना शरना ।
बढ गया चीर अपार परमेष्ठी ।

सोमा ने तुम सुमिरन कीना,
सर्प फूलमाला कर दीना ।
वर्ते मंगलाचार परमेष्ठी । जय

अमर शरण मे संप्रति आया,
कर्मों के दुःख से घबराया ।
शीघ्र करो उद्धार परमेष्ठी ।

सफल जीवन की मांग

जीवन सफल बनाना, बनाना प्रभु वीर जिनराज जी ।
मन मन्दिर मे घुप अन्धेरा, ज्ञान की ज्योति जगाना,
जगाना प्रभु वीर जिनराज जी ॥१॥

धधक रहा है द्वेष दावानल, प्रेम पयोधि बहाना,
बहाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥२॥

भोग वासना जला रही, अन्तर ताप बुझाना,
बुझाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥३॥

बीच भवर मे नवा फसी है, झटपट पार लगाना,
लगाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥४॥

न्याय मार्ग का पक्ष न छोडूं, शत्रु हो सारा जमाना,
जमाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥५॥

उत्कट सकट हस-हस झेलूं, अविचल धैर्य बधाना,
बधाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥६॥

प्राणी मात्र को सुख उपजाऊ, चाहूं न चित्त दुखाना,
दुखाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥७॥

मैं भी तुमसा जिन बन जाऊं, परदा दुई का हटाना,
हटाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥८॥

'अमर' निरन्तर आगे बढ़ूं, कर्त्तव्य—वीर बनाना,
बनाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥६॥

जप जप हर पल नवकार

जप-जप हर पल मन्त्र नवकार ।
तेरा सुधरेगा ऽऽऽऽ सारा जीवन,
सुधरेगा जीवन होगा भव से पार ।
जप—जप हर पल . ...
ओ बन्धु रे. . — बन्धु रे...... .... ।
णमो अरिहंताण से मन, हो जाता है गद् गद् पावन ।
इसी मन्त्र के आगे, पाप अठारह भागे ।
इस पद को बन्दो, बारम्बार । जप—जप (१)
सिद्धाण, णमो आयरियाण, जो भी इनका करता सुमिरन
रिद्धि सिद्धि पाये, धन्य—धन्य हो जावे ।
इस पद को वन्दो, बारम्बार । जप—जप.... (२)
उव ज्झायाण णमो, लोए शुभ कर्मों की बेल ये बोए ।
पाच पदो के मोती, ज्ञान की जगमग ज्योति ।
माला ये अनोखी लेवो, दिल मे उतार जप—जप (३)
याद करो इतिहास के पन्ने,
सेठ सुदर्शन और श्रीपाल ने,
इसी मन्त्र के द्वारा जन्म सुधारा ।
गौतम मण्डल कहे समझो, इसका पार
जप जप. .. (४)

卐

क्षमाशील ज्ञान सागर

(तर्ज : चुप--२ खड़े हो जरूर ·····)

गुण के निधान और संघ सिरताज जी,
क्षमाशील ज्ञानसागर पूज्य नानालालजी । टेर।।

ज्ञान के निधान आप, चारित्र भण्डार है ।
बालब्रह्मचारी आप, महिमा अपार है ।
प्रभु वीर के हैं, आप शासन शृंगार जी ।।१।।

सरल स्वभावी, सिंह सम ललकार है ।
सदा ही व्याख्यानो में, नई-नई ही बहार है ।
संघ रखवाले अनुशासन कमाल जी ।।२।।

दिवाकर जैन ज्योति, कीर्ति विशाल है ।
प्रात-प्रात में चमकती, आपकी मशाल है ।
तारण - तिरण भवसागर जहाज जी ।।३।।

पंचाचारी उग्र विहारी माधुरी मुसकान है ।
अहो निश जग के उत्थान का ही ध्यान है ।
युग के प्रणेता, धर्मपाल को निहाल जी ।।४।।

आत्मानन्दी ज्ञानानन्दी आनन्दी भण्डार है ।
सत्याचारी शुद्धाचारी मोक्ष के दातार हैं ।
समभावटशैली ऐसो देखी है कमाल जी ।।५।।

गुण नित गाईये, दर्शन पाईये ।
जहा गुरुदेव वहा, मगल गान गाईये ।
रिद्धि और सिद्धियो से, भर लो भडारजी ।।६।।

मोडीलाल पिता, माता आपकी शृंगार है।
दाता गाव धन्य वीरभूमि यह मेवाड है।
प्रगटे जहा हैं आप, महा अणगार जी ॥७॥
चरणो का दास है श्री संघ आपका।
कभी न भूलेंगे, उपकार गुरुराज का।
कृपामय सुदृष्टि बनी रहे, पूज्यराज जी ॥८॥

नमो नानेशाय

तर्ज—उमर है सतरह साल

नमो गुरुदेवाय, नमो नानेशाय,
भजले मन गुरुराज, जीवन इनसे बनता है,
गुरुवर का जपे जो नाम, सकट उसका टलता है ॥टेर॥

वृद्ध महिला जिसको ना था दिखता,
तेरे दर्शन से जिसको है अब दिखता,
भवर बीच तेरे सुमरण से, प्राणी बचता है ॥१॥

शृगार है माता, पिता मोडी प्यारे,
दाता में जनमें, हो विश्व गगन तारे,
तेरी भक्ति से कर्मो जाल करता है ॥२॥

हम है अज्ञानी, चरणो मे तेरे आये,
राह बता दो समता पै चल पाये,
"सुशील" का जीवन गुरु सम्बल से फलता है ॥३॥

दर्श पाने को

तर्ज—कोई पत्थर से न मारे...

रोज आयेंगे, गुरुवर के दर्शन पाने को।
हृदय उत्साहित हो रहा है, गुरु गुण गाने को ।टेर।

रक्त विकारों का, जीवन में मेरे रह न पाए,
आत्मिक ज्योति गुरुदेव, मेरी जलती जाय ।
तेरा ही नाम हो, हो ऽ ऽ सुबह और श्याम हो,
रहत संसार में भी, सदा निस काम हो हो ।
प्रयत्न मेरा बने, ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
प्रभुवर सा बन जावे को ।१।
हृदय..........

राग से गाए सदा गीत समता से भरे,
रही हर प्राणी की विषमता गुरुवर ही हरे ।
ध्यान तेरा धरे, विघ्न सारे टरे,
रहे कृपा गुरु की काम सारे सरे ।
भाव सुमन सजा ऽ ऽ ऽ ऽ
लाए हैं कुछ चढ़ाने को ।२।
हृदय............

लिया शरण है, गुरुवर हमे अपना लेना,
समता स्त्रोत से शुचि जीवन मेरा बना देना ।
शतशः सर झुकाए, पाप मेरा बहाए ।
सिद्ध शास्वत गति ना कोई ओर पाए,
"सुशील" तो है मगन ऽ ऽ ऽ ऽ
गुरु भक्ति में मिट जाने को ।३।
हृदय..............

जन्मोत्सव

तर्ज—संसार है इक............

यह जन्म दिवस आया, जन जन में हर्ष छाया,
जुग-२ जियो हे नाना, यह भाव सुमन लाया ।टेर।

बनो भाग्यशालिनी हैं, प्रभु माता शृङ्गारा,
देकर के जन्म तुमको किया जीवन उजियारा ।१।

पोखरना वंश पाया, मोडी कुल चमकाया,
तेरी देख के सुषमा को, परिजन आनन्द पाया ।२।

नश्वर दुनियाँ जानी संयम में ठानी,
मणिधर गणेश से है, पायी अमृतवाणी ।३।

सयम व्रत है पाया जीवन को सरसाया,
सेवा कर गुरुवर की सुसज्जित की काया ।४।

वह याद हमे आती महलों की है घटना,
जहा तुमको पहनाया गुरु ने चादर अपना ।५।

यह भार सम्भलवाया, शुभ भावना भाया,
बधन हो शासन का, कमल ने गुण गाया ।५।

समतादानी है

तर्ज—ससार है इक नदियां.......

यह समता दानी है, जिन धर्म सुज्ञानी है,
वन्दन शत-२ गुरुवर, कहे तेरी कहानी है ।

लिया जन्म सुदाता मे मोड़ी कुल पाया है,
शृङ्गार की कुक्षि को अनुपम दोहलाया है ।

शैशव बीता सुन्दर जब यौवन आया है;
नफरत सी दुनियां है, माया वेमानी है।
फिर कदम बढे तेरे, सयम व्रत चाहने को,
है खोज लिया तुमने गुरु के शुचि वाने को,
संयम को अपनाया चमकाया है काया,
सेवा मे रत रहकर, हुए आतम ज्ञानी हैं। २।
आसिन हुए आचार्य पद पर कीर्ति फैलाई है,
अपनी उज्जवल प्रतिभा जग को दरसाई है।
समता की यह माला जिसको पहनाई है,
'सुशील' हुआ वह पार नैया तिरजानी है। ३।

मिल जावे समता का सम्बल

तर्ज—मेरा जीवन कोरा कागज कोरा

हो जाये जीवन उजियारा, नाना गुरुवर द्वार,
मिल जाये समता का सम्बल हो जाये भव पार। टेर।

है दिशा मे भ्राति गुरुवर, राह नही पाये,
जहां चले वही प्रभु होकर बहुत खाये।
अब तेरे पावन चरण का ले लिया आधार। १।

हो नगर निर्माण समता के साकारो पे,
समता की शिक्षा जहा मिले दिवारो पे।
जहा मिले जीवन मे हमको सच्चे सुख का प्यार। २।

भावो को अर्पित करें 'समता' के सर्जक को,
अब करो 'उद्धार प्रभु' भय भीत भजक को।
हे प्रभु अजी सुनो 'वीरेन्द्र' करे पुकार। ३।

तर्ज—चांदनी ढल जायेगी

श्रृंगार मा के लाल हो, शासन प्रतिपाल हो,
अष्टम पटधर प्यारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। टेर ।।

पिता मोडीलाल है, छोडा मोह जाल है,
गजानन्द दुलारा रे, नाना गुरु म्हारा रे । बोलो ।। २

वीर आज्ञाधारी है, बाल ब्रह्मचारी है,
समता दर्शन प्यारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। बोलो ।। २

सूरत इनकी प्यारी है, छोडी दुनियादारी है,
दृढव्रत धारा रे, नाना गुरु म्हारा रे, ।। बोलो ।। २

सन्तो मे है श्रेष्ठ सत, गुणो का नही है अन्त,
जैन का सितारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। बोलो ।। २

गजानन्द के पाट पर, छत्तीस गुण धारकर,
चमका सितारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। बोलो ।। २

तिन्नाण और तारियाण, पद है आयरियाण,
वदन हमारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। बोलो ।। २

"राम" गुण गाता है, जीवन सजाता है,
आप सहारा रे, नाना गुरु म्हारा रे ।। बोलो ।। २

गुरु वन्दना

हाथ जोड मान मोड तिक्खुतु के पाठ से
गुरुवर स्वीकारो म्हारी वन्दना ।। टेर ।।

पुण्य प्रबल उदय मे आया घर-घर में आनन्द छाया ओ
गुरुवर पधार्‌या म्हारे आगण ।। हाथ जोड ।।

पुण्यवानी से आप पधार्‌या कृपा अपूर्व कीनी ओ
ऐसी कृपा तो सदा राख जो ।। हाथ जोड ।।
पंचाचारी उग्रबिहारी समताधारी गुरुवर ओ
चरणा री शरण मे म्हांने राखजो ।। हाथ जोड ।।

विनती सुन लेना

तर्ज—ओ मेरे दिले नादान

स्थाई,

ओ गणेश गण नायक म्हारी विनती सुन लेना,
म्हारी विनती पर गुरुवर, पूर्ण मेहर नजर देना ।।

अन्तरा

मोडी लाल जी रा नन्दन, शृंगार मां प्यारे हैं,
दांता गांव वासी, जोवन उजियारे है,
आशा किरणें बिखरे, वैसा है वर देना ।। १ ।।

गुरु गणेश सेवा कर, ज्ञानामृत पाया है,
प्रभु वीर की वाणी को, जन जन पहुचाया है,
समता सौरभ फैली, अघतिमिर को हर लेना ।। २ ।।

धर्म अलख जगा करके, धर्मपाल बनाये हैं,
करनी कथनी समसी, करके दिखलाये हैं,
नित त्याग तपस्या से, अन्तर घट भर देना ।। ३ ।।

धाय मातृ पद शोभित, बीकानेर बिराजे हैं,
वृद्ध सन्त–सती सग वह, तव दर्श के प्यासे हैं,
झोली समता युवा संघ की, भगवन अब भर देना ।। ४ ।।

दिल री पुकार रे

तर्ज—छुप गया कोई रे··· ···

सुनो समतादानी म्हारे, दिल री पुकार रे,
वृद्ध सन्त—सतिया हित हो, बीकाणे बिहार रे।
तरस रह्या है गुरुवर दरस ने थारे
काहे नजर ने बदलो· गुरुवर हमारे—२
दया मय दया सूं देव, अब तो निहार रे ॥१॥
पूर्ण व्रतो से शोभित, पचाचार पालते,
महावीर की वाणी सू, जगने सवारते,—२
ऐक्य सूत्रता रो देवो सब ने विचार रे ॥२॥
थारी सोम्य आभा मेटे, मन रो विकार रे,
स्व संस्कृति रा रक्षक, गुरु थे अपार रे—२
गजानन्द गुरु रे सघ रो, कियो विस्तार रे ॥३॥
समता युवा सघ ऊपर किरपा है करनी,
अगले चौमासे री हा, बीकाणे री भरनी,—२
'इन्द्र' 'घापू' रो आशा, होवे साकार रे ॥४॥

गुरु दर्शन पाया

तर्ज—तुझे देखकर जग वाले

स्थाई

अन्तरा

जैसे चाद को देख चकोरा, अति प्रसन्न हो जाता है,
वैसे हो मन गुरु दर्शन कर, फूला नही समाता है २,
थके हुए राही को मिल गई, तरूवर की शीतल छाया ॥१॥

गुरु की कृपा जिन सरिखी होवे यू ज्ञानी फरमाते हैं,
नित गुरु दर्शन करने से तो, पाप कर्म कट जाते है २,
उनकी नैया पार लगी है, जो गुरु के शरणे आया ॥२॥

सुख और दु ख को भूलके मनवा, भाव विभोर हो जाता है,
गुरु सेवा मे मन को लगा के, कितना आनन्द पाता है २,
इसीलिए तो वीर मण्डल ने भक्ति का पथ अपनाया ॥३॥

गुजराती भजन

मन माशु मलकाय, रोज तारी आबरवा ओछी थाय ॥टेर॥

अन्तरा

काला कर्म तने भोगवा पडशे,
तारा करेला तने भव-भवमा नड़शे
पाछल थी पछताय ॥ १ ॥ रोज····

फिक्स डिपोजिट ने बगला ओ तारा
जेने कहे छे तु म्हारा न म्हारा
अहि नत्थि तारु तलभार ॥ २ ॥ रोज ····

अन्तिम समय तारा सांसा रूंधासे,
जीवडो तारो एम तेम मुंभासे,
विच्छी जेवी वेदना ओ थाय ॥ ३ ॥ रोज······

शमशान घाटे तारा लाकडा मुकाशे,
जेना ऊपर तने सुवाडी देवाशे
भड-भड बलशे तारी काय ।। ४ ।। रोज

बारा दिवस पछी लाडवा खवासे
बे पाच बरस मा तने भूल जासे
बाता विसराई जाय ।। ५ ।। रोज

ज्ञानी गुरु कहे चे तीने चालजो,
वीर नी वाणी मा विश्वास राखजो
पाणी पेला बाधी लेजो पाळ ।। ६ ।। रोज....

तर्ज—मैं तेरी दुश्मन (नगीना)

स्थाई

वन्दन हो वन्दन हजारो वन्दन
जय-जय हो शृंगार नन्दन ।।टेर।।

अन्तरा

दीनबन्धु हो दीनदयाला, प्याला पिलाते समता वाला,
दर पे आता जय-जय गाता, झोली अपनी भर ले जाता,
ब्रह्मर्षि है दया के सदन ।। १ ।। जय

सकट मे है जिसने पुकारा, भेद न रखता सबको तारा,
डूबती नैया पार लगाई, सकट मोचन कर गये भारी,
देव तरसते करने दर्शन ।। २ ।। जय

फूल है झूठा जल भी झूठा, भक्ति ने मेरा मन है लूटा,
तीरथ बन गये गाव और नगरी, जहा भी जाये समता प्रहरी,
चमक रहा है तुमसे शासन ।। ३ ।। जय

दर पे आया हूं मैं भिखारी, मेटो गुरुवर जन्मो की भारी,
सेवक हूं मैं ना विसरा दो, दृष्टि महर की बरसा दो,
"इन्द्र" कहे तोड़ो कर्मों के बन्धन ।।४।। जय....

तर्ज—चिरमी· ··· (मारवाडी)

कर्म हसावे, कर्म रोवावे, ओ कर्म बड़ो बलवान
वारि जाऊ कर्मों ने ....

(१)

पांचू पांडव महाबलवन्ता हारी, द्रौपदी नारी,
बारह बरस तक वन-वन भटक्या, कर्मन की गति न्यारी
सोचो समझो मानवी थे सुणजो देकर ध्यान ।। वारि ।।

(२)

राजा हरिशचन्द्र तो भरियो, नीच तणे घर पानी,
मरघट की रखवाली कीनी, बेची सुतारा रानी,
कर्मों रे ही कारणे ऐ तो झेल्या कष्ट महान् ।।वारि।।

(३)

कर्मों रो फल पडे रे भोगणो आ सिगला ही जाने,
'वीर मंडल" केवे सुखः दुःख मिलसी कर्मों रे परवाने,
करणी आपो आपरी थे सुणो चतुर सुजान ।। वारि ।।
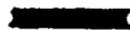
तर्ज—जिसे बनाना उसे मिटाना काम तेरा (फि शिवभक्त)

शेर

भगवान तेरे सामने करजोड़ ये विनती करे,
वो शक्ति हमको दीजिये कि आफतो से ना डरें ।

अस्थाई

वीर प्रभु स्वीकार करो प्रणाम मेरा,
सब मिल कर के गाते हैं, गुणगान तेरा ।

अन्तरा

मानव तो दानव बनकर के जीवन अपना खो रहा,
इतने दु खो को पाकर के भी कैसी नीद मैं सो रहा,
सोये हुओ को आ के जगा भगवान् मेरा ।। १ ।।

चादी के टुकडो के पीछे, धर्म कर्म विसरा रहे,
हीरे के बदले मे मूरख, पत्थर को अपना रहे,
मानव को मानवता दे, भगवान मेरा ।। २ ।।

क्रोध, मान और माया, लोभ ये जग मे दुश्मन चार हैं,
दुर्व्यसनो मे पड कर प्राणी इनके हुए शिकार हैं,
"वीर मण्डल" शरणागत है भगवान तेरा ।। ३ ।।

समय बलवान जान, तजो नर अभिमान
प्रभु गुण गाजा–ओ आजा, प्रभु गुण गाजा

(१)

एक समय श्री हरिशचन्द्र ने, भरा नीच घर पानी,
कासी बीच स्वय को बेचा, वेची तारा रानी,
मशानी वेश धार, दुःख तो सहे अपार
सत्य के काजा–आजा, प्रभु गुण···· ·····

(२)

एक समय श्री रामचन्द्र जी, हो गये वन के वासी
रावण ने धर कपट रूप, सीता को जाल मे फासी,

बिछुड गयी प्यारी सिया
करतो वो पिया–२ आन छुडा जा
हो आजा, प्रभु गुण ·

(३)

एक समय श्री कृष्ण जगत के थे वलशाली नामी,
मरते समय मिला नही पानी तीन खण्ड के स्वामी,
तेरी तो क्या है हस्ती
किस पर ये छाई मस्ती जरा बतलाजा
हो आजा प्रभु गुण गाजा · ·

(४)

दुनिया को कर फतेह सिकन्दर कहता मेरा,
काल चक्र ने आन दबाया जमीन पर कर दिया डेरा
पसारे दोनो हाथ खाली
ऊपर से मिट्टी डाली, भूल सब साजा
हो आजा, प्रभु गुण गाजा··· ·········

(५)

सुख देख मत फूल अरे मन दुख देख मत रोना,
जीत मल फस माया जाल मे वृथा जन्म मत खोना,
करो प्रभु भक्ति प्यारी
तन मन से ही करवारी लगन लगा जा हो आजा· ·

वीर जिनेश्वर सोई दुनिया जगाई तूंने,
ज्ञान की मधुर सुरीली बंसी बजाई तू ने ॥

भारत की नैया डोली, मृत्यु आ सिर पर बोली ।
स्वर्ग से आ कर भगवन्, पार लगाई तूंने ॥ वीर ॥ ॥१॥

पशुओ पर छुरिया चलती, रक्त की नदिया वहती ।
करुणा के सागर करुणा गगा बहाई तूंने ॥ वीर ॥ ॥२॥

देवो की करना पूजा, बस काम था और न दूजा ।
मानव की अटल प्रतिष्ठा, जग मे जगाई तू ने ॥वीर॥ ॥३॥

पथो का झूठा झगडा, जनता का मानस बिगडा ।
भेद सहिष्णुता की परखो सच्चाई तू ने ॥ वीर ॥ ॥४॥

पाप का पक धोना, नर से नारायण होना ।
अजर अमर पद की, राह दिखाई तू ने ॥ वीर ॥ ॥५॥

मारवाडी राग (रोकडा रुपया)

हीरो पायो नाना गुरुवर रे नाम रो जी ओ-२,
ओ तो नही है अज्ञानियो रे काम रो जी ओ ॥टेर॥

अन्तरा

ओ म्हारे आंगणिये, गुरुसा पधारिया जी,
तीरथ करिया म्हे तो चारो धाम रा जी ॥१॥

ओ म्हारे सिर पर गुरुसा रो हाथ है जी,
म्हाने मुक्ति ले जासी आपरे साथ मे जी ॥२॥

म्हारे ऊपर गुरुसा री मेहरवानी,
नाना गुरुवर सा दुनिया मे नही ज्ञानी ॥३॥

गुरु री सुरतिया लागे है सुहावणी जी
दर्शन करवा आवे है लाखो नर-नारी ॥४॥

जैन धर्म री रक्षा खातर बली डाल दी,
हु शि उ चौ श्री ज ग में नाना लाल जी ।५॥

"महावीर वाणी"

सययं मूढे धम्मं नाभि जाणइ

सदा भोगो में आसक्त मूढ प्राणी धर्म को नही समझ सकते ।

एगे चरेज्ज धम्मं

भले ही कोई सहयोग न दे, अकेले ही सद्धर्म का आचरण करना चाहिए ।

समियाए धम्मे

समता मे ही धर्म है ।

धम्मस्स विणओ मूलं

धर्म का मूल विनय है ।

आय तुले पयासु

प्राणियो के प्रति आत्म तुल्य भाव रखो ।

नच्चा नमइ मेहावी

मेधावी—प्रज्ञाशील ज्ञान पाकर विनम्र हो जाता है ।

खिप्पं न सक्के विवेग-मेउं

विवेक शीघ्र प्राप्त नही होता है ।

समो निंदा पसंसासु

निंदा और प्रशंसा में समभाव रखो ।

तमाओ ते तमं जंति, मंदा आरम्भ निस्सिया ।।

दूसरो के दुःख मे खुश रहने वाले अज्ञानी जीव अंधकार मे है और अंधकार मे ही जाते हैं ।

मेत्ति भूएसु कप्पए

सभी जीवो पर मैत्री भाव रखो ।

एगं इसिं हणमंतो अणंते जीवे हणइ

एक साधु की हिंसा अनन्त जीवो की हिंसा के बराबर है ।

तं सच्चं खु भगवं

सत्य ही भगवान है ।

भासियव्वं हियं सच्चं

सदा हितकारी सत्य बोलना चाहिए ।

सच्चं च हियं च मियं च गाहणं च

हित-मित-ग्राह्य हो वही सत्य बोलना चाहिये ।

अप्पणा सच्चमेसिज्जा

अपनी आत्मा से सत्य की खोज करो ।

असं विभागी न हु तस्स मोक्खो

जो प्राप्त सामग्री का साथियो मे बराबर विभाग नहीं करता, उसकी मोक्ष नही होती ।

तवेसु वा उत्तम-बंभचेरं

तपो मे श्रेष्ठ तप ब्रह्मचर्य है ।

इच्छा हु आगा समा अणंतिया

इच्छाए आकाश के समान अनत है ।

कामे कमाहि कमियं खु दुक्खं

कामनाओ का अन्त करना ही दुःखो का अन्त करना है ।

नाणो नो पमायए कयावि

ज्ञानी आत्मा को कभी भी प्रमाद नही करना चाहिए ।

समयं सयाचरे

सुखेच्छुक को सदा समता का आचरण करना चाहिए ।

समोय जे सव्व पाणेभूएसु, से हु समणे

जो समस्त प्राणियो के प्रति समदृष्टि रखता है वह श्रमण है ।

अहसेयकरी अन्नेसिइंखिणी

दूसरो की निन्दा किसी भी दृष्टि से हितकर नही है ।

चइज्ज देहं न हु धम्मं-सासणं

देह शरीर को भेले त्याग दें पर अपने धर्म शासन का कभी त्याग न करे ।

आणाए धम्मं

जिनेश्वर देव की आज्ञा मे ही धर्म है ।

उवसम सारं खु सामण्णं

श्रमणत्व का सार उपशम है ।

आयं कदंसी न करेइ पावं

आत्मदृष्टा साधक कभी पाप नही करते ।

न कम्मुणा कम्मं खवेंति वाला

अज्ञानी, कर्म से कर्मो को क्षय नही कर सकते । △

हे प्रभो आनन्द दा
शीघ्र सारे दुर्गुणो

लीजिए हमको शरण
ब्रह्मचारी धर्म रक्षक,

प्रेम से हम गुरुजनो
सत्य बोले झूठ त्यागें

निंदा किसी की हम
धैर्य बुद्धि मन लगाक

हे सरस्वती मात हम
हम अवोधो के हृदय

ऐसा अनुग्रह और
हो प्रजा सब ससार क

हे प्रभु यह प्रार्थन
सब सुखी ससार हो र